• वर्ष ६५ • अंक ११ • मूल्य ₹२० जून (प्रथम) २०२३

पाक्षिक

परोपकारी

महर्षि दयानन्द सरस्वती

साथ में ब्रह्मचारी रामानन्द

सुशोभित मंच

परोपकारिणी सभा एवं आर्यवीर दल जिला अजमेर के संयुक्त तत्त्वावधान में
14 से 21 मई 2023 तक आयोजित आर्यवीर दल शिविर के उद्घाटन समारोह के दृश्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुखपत्र

ओ३म्

*विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।*

वर्ष : ६५ अंक : ११

दयानन्दाब्द: १९९

विक्रम संवत् - ज्येष्ठ शुक्ल २०८०

कलि संवत् - ५१२४

सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२४

सम्पादक

डॉ. वेदपाल

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४
०८८९०३१६९६१

मुद्रक-देवमुनि-भूदेव उपाध्याय
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-४०० रु.

पाँच वर्ष-१५०० रु.

आजीवन (२० वर्ष) -६००० रु.

एक प्रति - २०/- रु.

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
०७८७८३०३३८२

ऋषि उद्यान : ०१४५-२९४८६९८

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

जून प्रथम, २०२३

अनुक्रम

०१. आर्यसमाज : लक्ष्य-उपलब्धि...	सम्पादकीय	०४
०२. वेद की गरिमा अपरम्पार	विद्यावती मिश्र	०७
०३. विचार वाटिका-१	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	०८
०४. आर्यसमाज का प्रचार:...	आ. रामनिवास गुणग्राहक	१२
* परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम		१४
०५. अग्नि सूक्त-४५	डॉ. धर्मवीर	१५
०६. ऋषि दयानन्द-द्विजन्मशताब्दी...	डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री	१९
०७. जन कल्याण के लिए वैदिक-विज्ञान	श्री रामनाथ वेदालंकार	२२
०८. संस्था समाचार	श्री ज्ञानचन्द	२६
* योग-साधना एवं स्वाध्याय शिविर		२७
* परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट		२९
०९. संस्था की ओर से....		३०
* 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति		३२
१०. आध्यात्मिक चिन्तन के क्षण	मुनि सत्यजित्	३३

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

आर्यसमाज : लक्ष्य-उपलब्धि-प्रासंगिकता एवं चुनौती

गताङ्क मई-द्वितीय से आगे

उपलब्धियाँ-

किसी भी संगठन या संस्था के लिए महत्त्वपूर्ण यह नहीं है कि उसके लक्ष्य या उद्देश्य कितने विशाल हैं? उसकी महत्ता इसमें है कि वह अपने समय के समाज की समस्याओं का कोई समाधान प्रस्तुत करता है या नहीं? उसके प्रस्तावित समाधान और प्रयत्नों से समाज का लाभान्वित होना, उसकी उपलब्धि है। आर्यसमाज के महत्तम लक्ष्यों द्वारा समकालीन समाज कितना लाभान्वित हुआ? यदि हाँ! तो ही उसकी उपलब्धि है।

वेद की निर्भ्रान्तता और उसका सत्यविद्याओं का पुस्तक प्रतिपादन, कितने अंश में वेद के अध्येताओं और गवेषकों को अभिमत है तथा महर्षि की वेदभाष्य शैली का अनुसरण कितने भाष्यकारों द्वारा किया गया अथवा किया जा रहा है-यह अध्ययन का विषय है।

महर्षि से पूर्ववर्ती सायण आदि भाष्यकार वेद में अवतारवाद के साथ बहुदेववाद मानते रहे हैं। सिद्धान्ततः यास्क को मानते हुए भी प्रायः यौगिक अर्थ की उपेक्षा की गई है। इन्द्र केवल देवता विशेष के रूप में स्वीकार किया गया, जिसका आचरण एवं कार्य अधिकांशतः शिष्टजन सम्मत नहीं है। यही स्थिति अग्नि आदि पदों के अर्थ को लेकर भी रही है।

महर्षि भाष्य का इतना प्रभाव अवश्य हुआ कि पश्चवर्ती योगी अरविन्द ने महर्षि भाष्य को वेदभाष्य की कुञ्जी कहा है। महर्षि द्वारा भाष्य करते समय अनेक अलंकारों के उल्लेख से वेद के कतिपय स्थल ऐतिहासिक विवरण की अपेक्षा आलंकारिक वर्णन स्वीकार किए जाने लगे। तद्यथा- मार्क्सवादी चिन्तक डॉ. रामविलास शर्मा ने अनेक स्थलों पर विशेषतः इन्द्र-वृत्र के सन्दर्भ में इसे आलंकारिक वर्णन स्वीकार किया है। स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक, प्रो. विश्वनाथ विद्यालंकार, आचार्य वैद्यनाथ, महामहोपाध्याय आर्यमुनि आदि अनेक भाष्यकार महर्षि का अनुगमन करते हैं।

प्रो. मैक्समूलर के प्रारम्भिक मन्तव्य जो संस्कृत साहित्य के इतिहास में व्यक्त हुए हैं तथा उनके जीवन के अन्तिम दशक के मन्तव्य विशेष रूप से तुलनीय हैं। सन् १८८४ में 'हम भारत से क्या सीखें?' संज्ञक व्याख्यान जो I.C.S. के लिए दिए थे, इनमें मैक्समूलर वैदिक ऋचाओं के सौन्दर्य को स्वीकार करते हैं। ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका की महत्ता का प्रतिपादन भी **इन व्याख्यानों में है। इन व्याख्यानों से तीस-पैंतीस वर्ष पूर्व मैक्समूलर की वेद विषयक धारणा इससे विपरीत थी। इस वैचारिक परिवर्तन में महर्षि की 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' की भूमिका निश्चय ही रही है,** क्योंकि अंक के रूप में प्रकाशित भूमिका व महर्षि वेदभाष्य के वह नियमित पाठक-ग्राहक थे।

भारतीय विश्वविद्यालयों में महर्षि वेदभाष्य को यथेष्ट स्थान आज भी प्राप्त नहीं है। चार-पाँच विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम में निर्धारण हमें तो सफलता प्रतीत नहीं होती। इस विषय में महर्षि भक्तों तथा महर्षि के प्रति आस्था रखनेवाले विद्वज्जनों के प्रयास चिन्तनीय हैं। विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रम निर्धारण की निश्चित प्रक्रिया है, उसका पालन करते हुए यदि प्रयत्न किए जाएं तो आंशिक सफलता तो प्राप्त हो ही सकती है। **यह कटु सत्य है कि हम महर्षि भक्त यह मानकर चलते हैं कि श्रेष्ठता के कारण महर्षि के विचारों को स्थान स्वतः ही प्राप्त होना चाहिए।** किन्तु प्रयत्न किये बिना विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम में यह सम्भव नहीं है। इसके

लिए दो ही मार्ग हैं- **१.** विधि के अनुसार यथास्थान-यथा अवसर अनथक प्रयत्न किए जाएं तथा **२.** महर्षि के वेद विषयक विचारों, महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों तथा महत्त्वपूर्ण सन्दर्भों पर सायण आदि भारतीय तथा पश्चिमी विद्वानों के भाष्यों के साथ महर्षि भाष्य का तुलनात्मक अध्ययन छोटे-छोटे ग्रन्थों, जिनकी विषयवस्तु तथा शैली प्रभावोत्पादक हो, के रूप में आकर्षक साजसज्जा के साथ प्रस्तुत किया जाए। साथ ही उचित स्थानों पर सप्रयास पहुँचाया जाए। यह व्यय साध्य कार्य जिस निष्ठा व धैर्य की अपेक्षा रखता है, वह नेतृ वर्ग में कहाँ है?

ईश्वर के यथार्थ स्वरूप प्रतिपादन के प्रयास व परिणाम आज अवश्य ही चिन्तन की अपेक्षा रखते हैं। महर्षि के समय ईश्वर के स्वरूप को समझकर अथवा महर्षि की वेदानुकूल ईश्वर की सच्चिदानन्दादि व्याख्या को यथार्थ तथा मूर्तिपूजा को अवैदिक मानकर अनेक विद्वानों ने स्वयं मूर्तियों को विसर्जित कर दिया था। आज तो ईश्वर के यथार्थ स्वरूप को जानकर मूर्तिपूजा छोड़ने वाले तो शून्य ही हैं, यदि कोई इसे छोड़ रहा है तो स्वयं को अविश्वासी Non Believer कहकर छोड़ता है। इसे क्या आप अपनी उपलब्धि मान सकते हैं?

वस्तुस्थिति यह है कि हिन्दूसमाज में प्रतिमापूजन बढ़ रहा है, वैष्णोदेवी, अमरनाथ (बर्फानी शिवलिंग) आदि के यात्री प्रतिवर्ष बढ़ रहे हैं। कांवड यात्रा अब से पचास वर्ष पूर्व वैयक्तिक यात्रा होती थी। कहीं-कहीं दो-चार कांवड यात्री साथ चलते दिखाई देते थे। पिछले कुछ वर्षों में उनकी संख्या में कल्पनातीत वृद्धि हुई है। अपने को महर्षि का अनुयायी कहने वाले सद्‌भाव के नाम पर इन यात्रियों पर पुष्प वर्षा करते दिखाई देने लगे हैं और अब तो नमाजियों पर हैलीकॉप्टर से पुष्प वर्षा के लिए भी (तथाकथित महर्षि भक्त कहलाने वाले संन्यासी द्वारा) जिला प्रशासन से अनुमति मांगी जा रही है। इसका अर्थ है कि ईश्वर के स्वरूप को जानने-जनाने के प्रयत्न शिथिल हो रहे हैं। वेद का प्रचार, नेतृ वर्ग के साथ विद्वज्जनों का एतद् विषयक आचरण ही सफलता का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

शिक्षा प्रसार- सबको शिक्षा का समान अधिकार ऐसा क्षेत्र है, जिसमें आर्यसमाज की उपलब्धियाँ गौरवपूर्ण हैं। एक ओर डी.ए.वी. संस्थान का देशव्यापी विस्तार, दूसरी ओर गुरुकुलों के प्रसार ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। आर्यसमाज के इस कार्य को सरकार द्वारा अपना लिए जाने के कारण भी शिक्षा सर्वजन सुलभ हुई है, किन्तु महर्षि प्रतिपादित आर्ष शिक्षण प्रणाली पिछले पचास वर्षों में गुरुकुलों में भी न्यून होती जा रही है। हाँ! गुरुकुल नाम से केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (C.B.S.C.) तथा राज्य शिक्षा बोर्ड से सम्बन्धित विद्यालय तो फूल-फल रहे हैं। **यह अवश्य स्मरण रहना चाहिए कि वैदिक संस्कृति का संरक्षण-संवर्धन तो आर्ष प्रणाली द्वारा ही सम्भव है।**

स्वतन्त्रता प्राप्ति के अनन्तर स्त्री एवं समाज के उपेक्षित वर्ग दोनों के अधिकारों का संरक्षण सरकार की नीतियों का अंग हो जाने के कारण आर्यसमाज का कार्य सरकार द्वारा किए जाने से स्थितियाँ बदल गई हैं। किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति से, पूर्व बहत्तर वर्षों के दीर्घकाल में महर्षि भक्तों ने जिन कष्टों, सामाजिक बहिष्कार जैसी परिस्थितियों की परवाह न करते हुए इन क्षेत्रों की बहुत बड़ी बाधाओं को पूर्व में ही दूर कर दिया था। जहाँ-जहाँ आर्यसमाज का प्रचार पहुँचा, वहाँ-वहाँ सामाजिक चेतना का विस्तार भी हुआ। आर्यसमाज की सदस्यता सभी के लिए समान रूप से सुलभ थी। गुरुकुलों में प्रवेश के लिए जन्मना जाति को कोई स्थान नहीं था। इसीलिए स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व अनेक विद्वान् (जिनका जन्म तत्कालीन प्रचलित जाति के अनुसार निम्न मानी जानेवाली जाति में हुआ था।) पढ़-लिखकर कार्यक्षेत्र में आ चुके थे। आर्यसमाज

में वह बिना किसी भेदभाव के सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त कर चुके थे। किन्तु संसद् एवं विधानसभाओं की सदस्यता के लिए राजनैतिक दलों ने इस प्रकार के व्यक्तियों को उन्हें जन्मना जाति के आधार पर उनके लिये आरक्षित सीटों पर चुनाव लड़वा दिया। इससे वह विद्वज्जन उन्हें अपनी जन्मना जाति के नेता बन बैठे। उन्हें तो संसद् अथवा विधानसभा की सदस्यता प्राप्त हुई, किन्तु जिस जन्मना जाति को छोड़कर वह पण्डित आदि सम्बोधनों से सम्बोधित किये जा रहे थे उसकी गरिमा को ठेस पहुँची।

बालविवाह सदृश कुप्रथा के विरुद्ध शारदा एक्ट नामक कानून लानेवाले दीवान बहादुर हरबिलास शारदा महर्षि के अनन्य भक्त तथा आर्यसमाज के सक्रिय कार्यकर्त्ता थे। इन्हीं के प्रयत्नों से विवाह योग्य आयु की सीमा को बढ़ाया गया। यह भी आर्यसमाज के मन्तव्यों की प्रतिष्ठा ही थी।

महर्षि की स्वदेशप्रेम की प्रेरणा का ही परिणाम था कि प्रथम पीढ़ी के महर्षि भक्त देश के स्वतन्त्रता संग्राम में अग्रणी रहे। श्यामजीकृष्ण वर्मा का लन्दन में स्थापित इण्डिया हाऊस प्रमुख देशभक्तों का आश्रय स्थल रहा है। लाला लाजपतराय, स्वामी श्रद्धानन्द, सरदार अजीतसिंह (भगतसिंह के चाचा), भाई परमानन्द, रामप्रसाद बिस्मिल आदि-आदि महर्षि भक्त ही थे। इसके अतिरिक्त स्वतन्त्रता आन्दोलन में अधिकांश आर्य अपना सामर्थ्य भर योगदान कर रहे थे।

धार्मिक ग्रन्थों के पुन: पाठ की दृष्टि से पौराणिक जगत् में इतना पविर्तन अवश्य हुआ कि पौराणिक कथाओं की आलांकारिक व्याख्या की जाने लगी है। धर्मग्रन्थों में प्रक्षेप को लेकर भी चर्चा होती रहती है। मनुस्मृति में प्रक्षेपानुसन्धान का महत्त्वपूर्ण कार्य प्रो. सुरेन्द्र कुमार ने किया है। यह विद्वज्जन समादृत है।

आर्यसमाज द्वारा किए गए महत्त्वपूर्ण प्रयासों का परिणाम एकाधिकबार चमत्कृत करनेवाला रहा है। वर्तमान के आन्दोलन, मेले देखकर यह विश्वास करना कठिन लगता है कि क्या यह सब सम्भव हुआ, तो किस प्रकार?

सर्वप्रथम मथुरा शताब्दी को लें। महर्षि जन्म के सौ वर्ष पूर्ण होने पर फरवरी सन् १९२५ में मथुरा में एक सप्ताह का आयोजन हुआ। इस आयोजन में नेतृवर्ग ने जिस आर्यत्व (सदाशयता, त्याग, समर्पण तथा संगठन की अपेक्षा स्वयं को छोटा मानना आदि) का परिचय दिया वह इतिहास का यथार्थ है। आज की परिस्थितियों में वह कल्पना प्रतीत होता है। शताब्दी समारोह का आयोजन महात्मा नारायण स्वामी के नेतृत्व में सम्पन्न हुआ था। स्वामी श्रद्धानन्द ने पंजाब के गरुकुल पक्ष तथा डी.ए.वी. के मतभेदों को दूर कर सभी को एक मंच पर लाने के लिए स्वयं को पीछे करके महात्मा जी को अध्यक्ष बनावाया था। इसका अपेक्षित परिणाम भी हुआ कि महात्मा हंसराज तथा डी.ए.वी. एवं प्रादेशिक सभा ने एक होकर आयोजन को भव्यताएँ/स्मरणीयता प्रदान करने में पूर्ण सहयोग किया।

शताब्दी समारोह की एक अन्य महत्त्वपूर्ण बात थी कि लाखों की संख्या में आर्यों की उपस्थिति के पश्चात् भी एक सप्ताह के आयोजन में न तो किसी की कोई वस्तु चोरी हुई और न ही पूरे आयोजन में किसी भी प्रकार की कोई अव्यवस्था। यह नेतृवर्ग के साथ-साथ तत्कालीन आर्यों के आर्यत्व का परिणाम था। क्या आज स्वत: स्फूर्त रूप में कई लाख की भीड़ महज श्रद्धा के आधार पर एकत्रित कर एक सप्ताह का उस प्रकार का आयोजन सम्भव है? यदि नहीं तो क्यों?

धर्म एवं संस्कृति रक्षा की दृष्टि से प्रारम्भ किया गया शुद्धि कार्य (जिसे आजकल घर वापसी कहा जा रहा है।) भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। स्वामी श्रद्धानन्द के नेतृत्व में किया गया शुद्धि कार्य जिसमें हजारों व्यक्ति घर वापसी कर वैदिक धर्म में सम्मिलित हुए। आज देश

तथा धर्म के सम्मुख उपस्थित अनेक चुनौतियों का समाधान आज भी इसी शुद्धि कार्य/घर वापसी में निहित है, किन्तु यह कार्य आज उतना सुकर नहीं है।

निजाम हैदराबाद-मीर उस्मान अली के शासन में हिन्दुओं के धार्मिक अधिकार निलम्बित थे। आर्यसमाज के सत्याग्रह आन्दोलन ने उन अधिकारों को बलिदान देकर पुनः प्राप्त किया। वैचारिक एकता और नेतृवर्ग के प्रति आस्था ही थी कि- पंजाब, दिल्ली, उत्तरप्रदेश, राजस्थान आदि से हैदराबाद पहुँचकर आर्यों ने लम्बे समय तक सत्याग्रह कर निजाम की जेलों को भर दिया। निजामशाही के साथ रजाकारों के अत्याचारों से अनेक बलिदान हुए, किन्तु अधिकार प्राप्ति तक आन्दोलन सफलतापूर्वक चला। उस समय के आर्यसमाज के बड़े नेता (म. कृष्ण, चाँदकरण शारदा, म. आनन्द स्वामी, पं. नरेन्द्र, पं. पूर्णचन्द्र, पं. प्रकाशवीर शास्त्री आदि सभी ने जेलयात्रा की।) सत्याग्रह कर जेल गए और आन्दोलन की सफलता प्राप्त करने में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। निजाम से माँगे मनवाना साधारण उपलब्धि नहीं थी।

हिन्दी रक्षा (पंजाब सरकार द्वारा पंजाबी भाषा-गुरुमुखी लिपि को अनिवार्य किए जाने के विरुद्ध) तथा गौ रक्षा आन्दोलन में भारी संख्या में सत्याग्रह कर जेलों को भर देना असाधारण कार्य था। इसमें शंकराचार्य स्वामी निरंजन देव तीर्थ के साथ स्वामी रामेश्वरानन्द तथा रामचन्द्र वीर ने आमरण अनशन किया था। यद्यपि आन्दोलन को नेतृवर्ग ने शासन की चाल में उलझकर अथवा सरकार से प्राप्त आश्वासन का विश्वास कर फरवरी सन् १९६७ में आन्दोलन को स्थगित कर दिया। इससे यह आन्दोलन वांछित परिणाम प्राप्त नहीं कर सका, किन्तु आर्यसमाज की सांगठनिक सक्रियता और समर्पण उसकी स्पृहणीय उपलब्धि है।

(क्रमशः)

डॉ. वेदपाल

वेद की गरिमा अपरम्पार

विद्यावती मिश्र

निहत है इनमें अक्षय ज्ञान,
प्रभु के अनुभव अनुसंधान,
देन इनका है सारा ज्ञान,
लक्ष्य है अग-जग का कल्याण,
विशद श्री-सुषमा के आगार!
वेद की गरिमा अपरम्पार!!

देन है प्रभु की परम पुनीत,
सिखाते ऐसी अनुपम नीति,
सत्य, शिव, सुन्दरमय संगीत,
लोक की प्रीति, अलौकिक रीति,
गूढ़ चिन्तन के पारावार!
वेद की गरिमा अपरंपार!!

मर्म सारे ये देते खोल,
सत्य सारे ये लेते तोल,
लक्ष्य का लेते पथ टलोल,
कि इसका प्रति अक्षर अनमोल,
अलौकिक गाथा का विस्तार!
वेद की गरिमा अपरम्पार!!

सार तुम लो इनका पहचान,
गूढ़ता लो तुम इनकी जान
और रख परम ब्रह्म में ध्यान
सृष्टि का ऐसा रचो विधान,
वेद-विधि जिसका हो आधार!
वेद की गरिमा अपरंपार!!

विचार वाटिका-१

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

तब और अब- जीव की अल्पज्ञता के कारण तथा कुछ लोकतान्त्रिक ढाँचे के कारण आर्यसमाज सरीखे परोपकारी संगठन में इसके जन्मकाल से ही इसकी विशेषताओं तथा विलक्षणता के साथ-साथ परस्पर के मतभेद तथा विदेशी सरकार की कूटनीति के कारण कुछ न्यूनतायें व दोष भी देखे गये। लाला लाजपतराय जैसे दूरदर्शी नेता ने तो इसके संगठन में कुछ दोष आने के बारे में यह लिखा है कि आर्यसमाज के सब विरोधी मिलकर इसे जो हानि न पहुँचा सके, वह सरकार के घुसपैठियों ने पहुँचा दी।

तथापि पूर्वकाल के आर्यसमाज के संगठन में सत्तर अस्सी वर्ष पूर्व जो विशेषतायें व गुण आर्यनेताओं, विद्वानों तथा जनसाधारण में मैं देखता रहा उनका स्मरण करके मेरी छाती अभिमान से फूलती है। अपने तो क्या बेगाने व विरोधी भी इस समाज का गुणगान किया करते थे।

नद्दोमलही जिला स्यालकोट के आर्यसमाज के उत्सव पर ठाकुर अमरसिंह जी से मौलाना सनाउल्ला का शास्त्रार्थ था। तब मौलाना ने कहा था, जब मैं आर्यसमाज में बोलता हूँ तो मुझे ऐसा लगता है कि **मैं एक यूनिवर्सिटी के स्टेज से बोल रहा हूँ।**

हमारे नेता कितने महान् व पूज्य थे इसका प्रमाण आज से कोई पैंसठ वर्ष पूर्व का लिखा महाशय कृष्ण जी का एक पत्र मेरे पास है। उसमें माननीय महाशय जी ने आर्यसमाज के इस सेवक को "माननीय राजेन्द्र जी" जैसे शब्दों से सम्बोधित किया। मैं तब उनके लिये एक बालक ही तो था। मैं 'माननीय' शब्द पढ़कर दंग रह गया और सोच में पड़ गया। उन पूज्य आर्यनेताओं का अपार प्यार पाकर उनके बड़प्पन से मैंने देश-विदेश के धार्मिक जगत् तथा साहित्य में अपना स्थान बना लिया और क्या लिखूँ?

एक बार मिर्ज़ाई सम्प्रदाय ने कादियाँ से अपने साप्ताहिक 'बदर' में आर्यसमाज पर एक घिनौना वार किया। मैंने मन्त्री श्री देसराज जी की आज्ञा से पूज्य पं. त्रिलोकचन्द्र जी से उस लेख का उत्तर देने को कहा। आपने उसे पढ़कर मुझे कहा, "अब सारा जीवन हमीं ने विरोधियों को उत्तर देना है? अब आप इसका उत्तर देंगे। आप अब इतने समर्थ हैं।"

यह घटना सन् १९५३-५४ की है। मैंने साप्ताहिक 'आर्यवीर' जालन्धर में एक लेखमाला में इसका अत्यन्त जोशीली भाषा में सप्रमाण उत्तर दिया। इसकी आर्यों में बहुत चर्चा व प्रशंसा सुनी गई। रायकोट आर्यसमाज पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की अनुकूल तिथियों पर ही उत्सव किया करता था। उसमें कई उपदेशक व महात्मा पहुँचे। अपने डेरे पर इकट्ठे बैठे सब उपदेशक मेरी उस लेखमाला की भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे थे। पूजनीय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी बड़े ध्यान से सबको सुनते रहे।

फिर अत्यन्त भावनाशील हृदय से बड़े स्नेह से सबको कहा, "आप यह तो सब मानेंगे ही कि आर्यसमाज तथा ऋषि दयानन्द पर कोई विरोधी वार करे तो राजेन्द्र 'जिज्ञासु' चुप करके नहीं बैठेगा। वह लेखनी व वाणी से उसका 'दन्दानशिकन'=दाँत तोड़नेवाला उत्तर देगा।"

श्री पं. ओम्प्रकाश जी वर्मा वहाँ सुने स्वामी जी के इस कथन की चर्चा किया करते थे। मुझे भी यह प्रसंग आप ही ने सुनाया। पाठकवृन्द! यह मानेंगे कि उस लौहपुरुष महान् संन्यासी नेता के इन शब्दों ने भी मुझे आगे बढ़ाने व वहाँ पहुँचाने के योग्य बनाया जहाँ मैं आज हूँ। मैं फिर निरन्तर साठ वर्ष तक विरोधियों के लेखों का 'तड़प-झड़प' आदि शीर्षक से उत्तर देते हुये एक इतिहास बना पाया।

उपाध्याय जी ने सृष्टि के इतिहास में आर्यधर्म पर जितना लिखा है उसका दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। आपने अपवाद रूप में ही दो-चार पुस्तकों पर विद्वानों

के प्राक्कथन लिखवाये। कुछ सम्मतियाँ अपने ग्रन्थों में दीं। ये अधिक से अधिक दस बारह ही होंगी। इनमें से 'इस्लाम के दीपक' ग्रन्थ पर मेरी भी सम्मति छपी मिलती है, जिसका मुझे उनके निधन के कई वर्ष बाद पता चला।

यह कुछ संस्मरण मैंने दिये हैं जिनके ऐतिहासिक महत्त्व को कौन झुठला सकता है? ऐसे और अनेक संस्मरण मेरे पास हैं। अब एक और विलक्षणता आर्यसमाज की पढ़कर धर्मबन्धु गर्वित होंगे। देश-विदेश में वैदिक विद्वानों की तथा आर्य साहित्य की मत पन्थों के ग्रन्थों में प्रशंसा पढ़कर आर्यसमाजी झूम उठते थे। भूमण्डल प्रचारक मेहता जैमिनी जी तथा आचार्य रामदेव जी के व्याख्यानों तथा साहित्य की पूरे आर्यजगत् में धूम थी। जो आर्यसमाजी नहीं थे वे भी उनके ऐसे लेखों व व्याख्यानों को पढ़ सुनकर अत्यन्त प्रभावित होते थे। वे पूरे विश्व साहित्य पर आर्यविद्वानों की छाप का सूक्ष्म और व्यापक ज्ञान रखते थे। मैं उनकी इस कीर्ति का एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हूँ।

और आज! - आज आर्यसमाज की कीर्ति, प्रभाव और छाप तथा आर्यविद्वानों की कीर्ति व छाप की आर्यसमाजी वक्ता व लेखक चर्चा करते ही नहीं। कारण मैं क्या बताऊँ? मत पन्थों को अपने जाने-पहचाने विद्वानों साहित्यकारों की उपलब्धियों को मुखरित करने की चिन्ता है आर्यसमाजियों को तो महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द व लाला लाजपतराय के इतिहास को मुखरित करने की कतई चिन्ता नहीं। मैं श्री लक्ष्मण जिज्ञासु को साथ लेकर Who's who ग्रन्थ प्रकाशित करने वाली एक संस्था में गया। उसके संचालक महोदय मेरे प्रेमी कृपालु थे। मेरी यह चाहना थी कि डॉ. धर्मवीर, डॉ. वेदपाल, डॉ. ज्वलन्त कुमार, डॉ. सुरेन्द्र कुमार, आचार्या सूर्यादेवी, डॉ. ब्रह्ममुनि आदि आर्यविद्वानों साहित्यकारों के नाम उनके अगले ग्रन्थों में ला सकूँ।

वह मेरे कृपालु तब कार्यालय में नहीं थे। उनके कार्यालय वालों ने चलभाष पर मेरे आने की सूचना दी तो आपने मुझसे बात की। मैंने अपना प्रयोजन बताया। वह सज्जन मान गये कि वह ऐसे करेंगे। फिर मेरी गतिविधियाँ ही ऐसी हो गई कि मेरा कहीं अधिक जाना-आना रुक सा गया।

केवल एक ही आर्यसमाजी का देश-विदेश के ऐसे साहित्य में जीवन परिचय छपता रहा और भारत सरकार की साहित्य अकादमी ने देश के ग्यारह सहस्र के लगभग (सब भाषाओं के) साहित्यकारों का जीवन परिचय छापा है। उसमें भी केवल एक ही आर्य साहित्यकार का जीवन परिचय छपा मिलता है और वह है राजेन्द्र 'जिज्ञासु'। आर्यसमाज में किसी को भी इस बात की अब चिन्ता नहीं कि हम पिछड़ गये हैं। अपना-अपना ढोल पीटने की तो कई एक को ख़ूब चिन्ता है। ऋषि मिशन की किसे चिन्ता है?

आर्यसमाज के डेढ़ सौ वर्ष के इतिहास में पहली बार डॉ. अलिफ नाज़िम नाम के एक देशभक्त उदार हृदय मुसलमान ने उर्दू साहित्य के एक चोटी के यशस्वी कवि आर्यसमाज के मन्त्री रह चुके महाकवि दुर्गासहाय जी सुरुर के काव्य संग्रह को देवनागरी लिपि में सम्पादित करके उसके जीवनवृत्त के सहित एक बहुत बड़ा ग्रन्थ रचकर श्री जितेन्द्र गुप्ता के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित कर दिया है। आर्यसमाज की विचारधारा के इस अत्युत्तम ग्रन्थ पर किसी भी आर्यसमाजी का एक भी लेख न छपना एक दुःखद घटना है।

एक विदेशी स्कॉलर- शहरयार शीराज़ी एक हिन्दी जानने वाले विदेशी मुस्लिम स्कॉलर ने इग्लैण्ड से आर्यसमाज के शास्त्रार्थों पर पीएच.डी. किया है उसका निष्कर्ष आर्यसमाज के विरुद्ध जा रहा था उसने उन्हीं दिनों परोपकारी में छपे मेरे कुछ लेख पढ़ लिये जिनमें शास्त्रार्थों की कुछ चर्चा थी। उसका श्री अजय आर्य प्रकाशक से सम्पर्क हो गया। वह अजय जी से आर्यसाहित्य मँगवाता रहता था। दोनों का संवाद व पत्रव्यवहार भी चलता रहा। अजय जी से मेरी कई पुस्तकें मंगवा कर पढ़ीं। वह इन्हें पढ़कर बहुत प्रभावित हुआ।

उसके शोध प्रबन्ध का निष्कर्ष बदल गया। उसने अब लिखा आर्यसमाज के शास्त्रार्थों के कारण हिन्दू, मुसलमान, ईसाई सबको एक-दूसरे की बात सुनने, समझने का अवसर मिलता रहा। परस्पर मेल मिलाप व संवाद से सब एक-दूसरे के निकट आये। अजय जी द्वारा ही उसका मुझसे सम्पर्क व पत्रव्यवहार आरम्भ हुआ।

हमारे तीन महापुरुषों के जीवन चरित्र- सज्जनवृन्द यह आर्यसमाज के लिये अत्यन्त गौरवपूर्ण उपलब्धि है कि गत १५० वर्ष में पहली बार एक मुसलमान भाई ने आर्यसमाज की तीन विभूतियों के जीवन चरित्र लिखने की मुझे प्रेरणा दी। स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज, रक्तसाक्षी पण्डित लेखराम जी तथा पं. रामचन्द्रजी देहलवी के जीवन लिखकर अजय जी को दिये तो उन्हें एक समय सीमा में अजय जी ने प्रकाशित करके उसे पहुँचा दिया। देहलवी जी पर आर्यसमाज एक पचास पृष्ठ की पुस्तक न छपवा पाया। उस विदेशी मुसलमान की प्रेरणा से ४०० पृष्ठ का बड़ा ग्रन्थ छप गया। यह कितनी बड़ी घटना है? मैंने इन तीनों के प्राक्कथन में उसकी प्रेरणा के लिये आभार प्रकट किया है। आर्यसमाज के इतिहास के तीसरे भाग में यह प्रसंग पाठक पढ़ लें। किसी भी आर्यसमाजी ने इस पर गर्व से एक भी लेख नहीं दिया। क्या अजयजी ने इतिहास बदलकर, नया इतिहास रचकर आर्यजाति का सिर ऊँचा नहीं कर दिया? क्या हम दोनों ने यह स्वर्णिम अध्याय इतिहास में पेट सेवा के लिये जोड़ा है?

सज्जनो! एक और ऐतिहासिक प्रसंग ध्यान से अब नोट कर लीजिये। शोलापुर डी.ए.वी. कॉलेज के कन्नड़ भाषा के अत्यन्त अध्ययनशील प्राध्यापक श्री दीवान जी आर्यसामाजिक साहित्य के प्रामाणिक ग्रन्थों को बहुत श्रद्धा से पुस्तकालय में बैठकर पढ़ा करते थे। मुझसे पूछ-पूछकर पूज्य पं. युधिष्ठिर मीमांसक, श्रद्धेय ब्रह्मदत्त 'जिज्ञासु', पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय, पं. भगवद्दत्त का पर्याप्त साहित्य आपने गहराई से पढ़ा।

आपने एक दिन मुझे कहा, ''यहाँ भारत का सर्वोच्च साहित्यिक पुरस्कार प्राप्तकर्त्ता कन्नड़ महाकवि बेन्द्रे जी पधारे हैं। आप उनसे मिलना चाहें तो क्या मैं आपके लिये उनसे समय ले लूँ?'' मैंने कहा, अवश्य लीजिये।

महाकवि बेन्द्रेजी ने सहर्ष मुझे मिलने का समय देना स्वीकार कर लिया। मेरे मित्र प्राध्यापक दीवान जी ने कहा, ''मैं साथ ले चलूँगा।''

मैंने आर्यसमाज की ओर से उनको कुछ विशेष साहित्य भेंट करने के लिये एक पैकेट बना लिया। कॉलेज के पश्चात् प्राध्यापक दीवान जी के साथ चलना था। कॉलेज में तीनों डी.ए.वी. कॉलेजों के प्रोफेसर और दो के प्रिंसिपल यह देखकर दंग रह गये कि देश का जाना-माना विद्वान् महाकवि मुझे दर्शन देने-मिलने के लिये कॉलेज में पहुँच गया। वे सेवानिवृत्त हो चुके थे और मैं तब जवान था। २५-३० प्रोफेसर उस मिलन और संवाद को देखने-सुनने वहीं बैठ गये। नमस्ते करके उन्हें मैंने वह साहित्य सादर भेंट किया। आपने पैकेट खोलकर पहला ग्रन्थ उपाध्याय जी कृत वेद प्रवचन देखकर वेद की महिमा और ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली पर कई शास्त्रीय वचन बोलकर बहुत कुछ कहा। दक्षिण भारत के तीन-चार प्रदेशों के उन प्रोफेसरों ने एक कन्नड़ महाकवि के मुख से वेद तथा ऋषि की महिमा पर ठोस विचार सुने। महाकवि जी को दत्तचित्त होकर सब सुनते रहे। मैं बीच-बीच में थोड़ा कभी बोलता था और कोई बीच में नहीं बोला।

फिर एक पुस्तक भारतीय सस्कृति का इतिहास देखकर ऊपर पं. भगवद्दत्त जी का नाम पढ़कर वे बोले ''Pandit Bhagavadatta is a great son of Bharat Mata.''

मैंने उस भेंट पर एक पठनीय प्रेरणाप्रद लेख सार्वदेशिक सभा को भेजा। श्री लाला रामगोपाल जी ने उसे अत्यन्त आदर से प्रकाशित किया। मुझे मिलने पर बधाई दी। पं. भगवद्दत्त जी ने भी इसे पढ़कर आशीर्वाद

दिया और मेरे पूछने पर बताया कि महाकवि मुझसे बड़ा प्रेम करते हैं। श्री विजय कुमार जी आर्य ने भी बधाई देते हुये कहा, ''आपने हमारे साहित्य को इतने बड़े साहित्यकार तक पहुँचाया।''

कुछ वर्ष पश्चात् जब धर्मवीर जी की अन्तिम महाराष्ट्र यात्रा के समय मैं उनके साथ सोलापुर होते हुये गुंजोटी गया तब आर्यसमाज सोलापुर के सत्संग से बाहर निकलते ही कई सज्जनों ने मुझे घेर कर पूछा, ''आपकी महाकवि बेन्द्रे जी से कैसे भेंट हुई? कुछ बतायें।'' मैंने पूछा, ''आपको कैसे इस भेंट का पता चला?''

उन्होंने बताया महाकवि का सुपुत्र यहाँ आर्यसमाज में आपके संस्मरण लेने आया था। अपने पिता की जीवनी में देने थे। उसे बताया गया, वह पंजाब चले गये। पिता की डायरी से उसे आपकी भेंट का पता चला। धर्मवीर जी को यह सुनकर बहुत आनन्द हुआ।

जब मेरी उनसे भेंट हुई उस स्टॉफ रूप से प्रिंसिपल का कार्यालय दो मिनिट की दूरी पर था। वह डी.ए.वी. कमेटी का सचिव रहा। इतना महान् साहित्यकार कई विषयों का विद्वान् कॉलेज में आया। कॉलेज पत्रिका में इस पर एक शब्द न छपा। कॉलेज को इससे क्या? यह तो दयानन्द, भगवद्दत्त पण्डित या जिज्ञासु के लिये कुछ महत्त्व की घटना होगी।

आज तक आर्यसमाज में किसी ने इस घटना की चर्चा नहीं की और न कोई लेख दिया। यह है तब और अब के आर्यसमाजियों का अन्तर। अब यह इतिहास आर्यसमाज के इतिहास का अंग बन चुका है। भले ही सभा, संस्थाओं के लिये इस प्रसंग का कोई महत्त्व न हो, परन्तु देश-विदेश के सिद्धान्तनिष्ठ आर्य इसे अब चाव से पढ़ेंगे और इसके प्रचार-प्रसार को अब कौन रोक सकता है?

यदि उस समय महाकवि के जीवनकाल में कर्नाटक के आर्यसमाजी इस सम्बन्ध में महाकवि से भेंट करके उनका साक्षात्कार लेते तो बड़ा लाभ होता। देशभर से महाकवि जी से मिलकर किसी आर्य ने इस घटना की, उस साहित्य की कोई चर्चा ही न छेड़ी। पूज्य पं. सुधाकर जी ने भी मुझसे यह प्रसंग सुनकर महाकवि की योग्यता व सौजन्य की चर्चा की। पण्डित जी तो विकलांग थे। वह भागदौड़ कर नहीं सकते थे।

दक्षिण में एक और कन्नड़ साहित्यकार विद्वान् श्री करन्थ ने अपनी आत्मकथा में स्वामी श्रद्धानन्द जी की शूरता महानता की एक निराली घटना दी है। मेरे ग्रन्थ में इसे पढ़कर अमेरिका में बैठे रज्जीत आर्य ने मेरी जानकारी के स्रोत का कन्नड़ नाम पूछा। मैंने बता दिया। किसी अन्य का उधर ध्यान ही नहीं गया। श्री करन्थ की दृष्टि में देश के अन्य नेता स्वामी श्रद्धानन्द जी के सामने मानो कि बौने थे। **(क्रमशः)**

शुल्क वृद्धि की सूचना

परोपकारी के पाठकों बडे भारी मन से सूचित करना पड रहा है कि कागज के मूल्य और छपाई के अन्य साधनों के मूल्यों में बेतहाशा वृद्धि के कारण जनवरी 2023 से सदस्यता शुल्क बढाना पड रहा है। बढी हुई दरें इस प्रकार से हैं –

भारत में

एक वर्ष –	400/–	पांच वर्ष –	1500/–
आजीवन (20 वर्ष) –	6000/–	एक प्रति –	20/–

आर्यसमाज का प्रचार : कुछ चिन्तनीय कुछ करणीय

आचार्य रामनिवास 'गुणग्राहक'

आर्यसमाज के जीवन की सजीव झलक आर्यसमाज के तीसरे और छठे नियम में देखी जा सकती है। यूँ तो आर्यसमाज का प्रत्येक नियम मानवीय गुणों के विकास का मूल्यवान् सोपान है, मगर वेद को सब सत्य विद्याओं का पुस्तक मानकर वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना परमधर्म स्वीकार कर वेद का नित्य स्वाध्याय-प्रवचन करते हुए संसार के उपकार अर्थात् मनुष्य मात्र के शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करने में जीवन समर्पित कर देना एक आर्य के जीवन का उद्देश्य बन जाए तो उसके लिए इससे बड़ी उपलब्धि कुछ नहीं होगी। विचार करके देखें तो तीसरे नियम का अनुष्ठान करके हम छठे नियम का पालन करने की अन्त:शक्ति प्राप्त करते हैं। छठा नियम हमारे जीवन की कार्ययोजना देकर हमारे कार्यक्षेत्र से परिचित कराता है, तो तीसरा नियम हमें उसके लिए बौद्धिक आत्मिक दृष्टि से समर्थ बनाता है। आर्य कहलाने वाले सभी सज्जन आत्मावलोकन करके अपने बारे में निष्पक्ष निर्णय दें कि इन दोनों नियमों का पालन करने की दृष्टि से हम कहाँ खड़े हैं? हर समाज-संस्था में कर्मठ और अकर्मण्य, समझदार और नासमझ तथा समर्पित और दिखावा करने वाले लोग न्यूनाधिक मात्रा में होते ही हैं। आर्यसमाज के प्रारम्भिक काल में कर्मठ, समझदार और समर्पित आर्य अधिक संख्या में थे। परिणामत: आर्यसमाज देश और दुनिया में खूब फैला और खूब बढ़ा। अब स्थिति बदल गई है। आर्यसमाज का तेज, बल और प्रभाव पहले जैसा नहीं रहा तो मानना पड़ेगा कि हमारी कर्मठता, समझदारी और समर्पण में कमी आई है। शोक है कि कर्मठता और समर्पण में आई कमी को हम संकोच के साथ स्वीकारते तो हैं, लेकिन इनको दूर करने के सार्थक प्रयास करने की सोच मुखरित होती नहीं दिखती।

हमें वर्तमान परिपाटी से हटकर कुछ ऐसा करना ही होगा, जिससे आर्यसमाज का पुराना गौरव और प्रताप पुन: जीवित हो उठे। क्या कोई यह स्वीकार करेगा कि आर्यसमाज के सभी विद्वान्, सभी कार्यकर्त्ता, सभी पदाधिकारी और सभी प्रचारक-उपदेशक श्रद्धा और समर्पण की दृष्टि से रिक्त-हृदय हैं? क्या किसी के हृदय में वेद-धर्म और ऋषि दयानन्द के तप-त्याग और बलिदान के प्रति तनिक भी श्रद्धा शेष नहीं है? ऐसा कहना सत्य न होगा, आज भी हमारे मध्य ऐसे विद्वान्, प्रचारक-उपदेशक व कार्यकर्त्ता हैं, जो वेद, धर्म और ऋषि दयानन्द के प्रति हृदय में श्रद्धा, सम्मान और अपनत्व के भाव रखते हैं। मेरा बड़ा स्पष्ट अनुभव है कि विशुद्ध धर्मभाव से आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार की योजना बनाकर, विशुद्ध धर्म भाव से आर्यविद्वानों, प्रचारक-उपदेशकों का आह्वान् किया जाए तो १०-२० नहीं ५०-१०० विद्वान्, उपदेशक इस दिशा में केवल धर्मभाव से काम करने के लिए आगे आ सकते हैं। मेरा हृदय सर्वांश में यह स्वीकार करता है कि आर्यों के विशुद्ध धर्मभाव को उत्साहित करके आर्यसमाज का कायाकल्प किया जा सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि ऐसा आह्वान और उत्साहवर्धन करनेवाला भी कोई दोहरे चरित्र का, दिखावा करने और समझौतावादी प्रवृत्ति का न होकर विशुद्ध धर्मभाव वाला आर्यपुरुष ही होना चाहिए। डॉ. धर्मवीर जी का व्यक्तित्व ऐसा था, उनके जीवनकाल में उनके साथ जिनका तालमेल नहीं बन पाया हो, वे लोग भी उनके कृतित्व और व्यक्तित्व में चारित्रिक, व्यावहारिक, सैद्धान्तिक और आर्थिक दृष्टि से कोई दोष नहीं लगा सके। लोकैषणा से सर्वथा मुक्त डॉ. धर्मवीर जी आर्यसमाज के संगठन की दृष्टि से भी सदैव संवदेनशील रहे। उनके जीवनकाल में लगता था कि परोपकारिणी

सभा सच्चे अर्थों में महर्षि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी सभा के रूप में ही प्रगति कर रही है। आह!! दैवदुर्विपाक!! उनका जाना देश-विदेश के सभी आर्यों के लिए ऐसा था, मानो उन सबका अपना ही उनसे बिछुड़ गया हो।

डॉ. धर्मवीर जी के सामने मैंने आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार को लेकर अपनी एक अभिनव योजना रखी थी। उस योजना के अनुसार भूपेन्द्रसिंह व लेखराज के साथ मैं १५-२० दिन परतवाड़ा (महाराष्ट्र) प्रचार यात्रा पर गया था। मैंने डॉ. धर्मवीर जी से निवेदन किया था कि आप आर्यसमाज के उपदेशक-भजनोपदेशकों के लिए एक सार्वजनिक आह्वान प्रसारित करें कि हम सामान्य जन से दान के रूप में शतांश या दशांश धर्मकार्यों में देने का सन्देश देते हैं। क्या हम उपदेशकों के लिए यह नियम लागू नहीं होता? क्या हमें अपना शतांश वा दशांश नहीं देना चाहिए? इसके लिए धन न दे सकें तो एक वर्ष में कम से कम एक-दो सप्ताह का समय बिना दक्षिणा के प्रचार में लगा सकते हैं। बिना दक्षिणा के विशुद्ध धर्म भाव से हमारे उपदेशक अपनी सुविधानुसार वर्ष में कभी भी यह समय निकाल वेदधर्म का प्रचार-प्रसार करें तो निश्चित रूप से इसके बड़े सुखद और चमत्कारिक परिणाम मिलेंगे। इसके लिए वे समय और स्थान (क्षेत्र) या तो अपने निकटवर्ती गाँव-नगर के रूप में चुन लें अथवा ऋषि की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा के मार्गदर्शन में एक योजनाबद्ध ढंग से प्रचार करें। सभा को जुड़कर कार्ययोजना के अनुसार प्रचार करना प्रभावी परिणाम देने वाला होगा। मैं परोपकारिणी सभा का उल्लेख इसलिए कर रहा हूँ कि मेरे ध्यान में तब परोपकारिणी सभा का ही नाम आया था। दूसरे मैं अपने हृदय के निकट आज भी निष्पक्ष भाव से विचार करता हूँ तो डॉ. वेदपाल जी के कुशल और दूरदर्शी नेतृत्व में गतिमान परोपकारिणी सभा ही सबसे उपयुक्त विकल्प दिखता है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि कतिपय आर्यजन इसे दूसरे कल्पित अर्थों में लेकर कुछ कुण्ठाएँ पाल लें, यह कहने लगें कि परोपकारिणी ही क्यों? हम या हमारी सभा-संस्था क्यों नहीं? निश्चित रूप से मैं देशभर की सभी आर्य सभा-संस्थाओं के बारे में व्यक्तिगत रूप से अधिक नहीं जानता। जिनके बारे में जानता हूँ, मुझे लगता है कि मैं परोपकारिणी सभा का नाम लेकर अन्याय नहीं कर रहा। मैं पुनः निर्द्वन्द भाव से कह सकता हूँ कि आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार के लिए अन्य संसाधनों की अपेक्षा धर्मभाव और पुण्य प्राप्ति की पवित्र भावना सर्वाधिक मूल्यवान तत्त्व है, जिसका अभाव आजकल प्रत्येक आर्य को कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में हृदय तक खटकता है।

तो चलिये, अपने मूल विषय पर आते हैं। कुछ दिन पहले डॉ. वेदपाल जी से भी इस विषय पर मेरी चर्चा हुई है। यह केवल ठकुर सुहाती नहीं है, जिन सुधि आर्यों में मेरी पुस्तक ''आर्यसमाज : प्रश्न जीवन-मरण का'' पढ़ी है, वे जानते हैं कि दो मार्च २०१६ को जब मैं गुरुकुल कुरुक्षेत्र में रहकर वहाँ से प्रकाशित मासिक-'गुरुकुल दर्शन' के सम्पादक के रूप में कार्य कर रहा था, तब डॉ. वेदपाल जी के साथ चलभाष पर आर्यसमाज की वर्तमान स्थिति को लेकर ऐसा मर्मोच्छेदक वार्तालाप हुआ कि मैं उनकी अन्तर्वेदना सुनकर हिल गया। मेरी वह पुस्तक उसी वार्तालाप का परिणाम है, जिसे पढ़कर आर्यजन अब तक मुझे फोन पर प्रतिक्रिया देते हैं। डॉ. वेदपाल जी को इतने गहरे तक जान और समझकर मैं यह लिखने का साहस कर रहा हूँ कि डॉ. वेदपाल जी के नेतृत्व में परोपकारिणी सभा धर्मभाव की दृष्टि से मेरे निकट आज भी प्रथम विकल्प है। आर्यसमाज के उपदेशकों-विद्वानों में मेरा नाम कहीं नहीं आता, लेकिन मैं यह योजना प्रस्तुत कर रहा हूँ तो मेरा कर्त्तव्य है कि उसके लिए मैं सर्वप्रथम स्वयं को प्रस्तुत करूँ। मैं सभा के प्रधान और सभी अधिकारियों से निवेदन करता हूँ कि आप स्वयं को ऋषि के उत्तराधिकारी के रूप में देखें। डॉ. धर्मवीर जी की भाँति स्वयं को गौरवान्वित अनुभव

करें और उसी गौरव को हृदय में रचा-बसाकर इस कार्ययोजना पर विचार करें। आप अपने बड़प्पन और आर्यजनों के सौहार्दिक धर्मभाव का मूल्यांकन करके इस दिशा में कार्यारम्भ करें। हम सबके जीवन में न्यूनताएँ होती ही हैं, अपने उत्तरदायित्व को उनके नीचे न दबने दें। बड़ा बनकर बड़ा सोचने वाले ही सदैव कुछ बड़ा कर पाते हैं। कार्ययोजना बनायें, आर्यों को आह्वान करें। आर्यविद्वानों-उपदेशकों से भी मेरा विनम्र निवेदन है कि पुराने आर्यों के तप-त्याग और धर्म धुन को हृदय में उभारकर अनुभव करें। हमारे सामने ईंट-पत्थर खाने, अपमानित होने जैसी स्थिति नहीं आयेगी। धन कमाने की धुन में धर्म की अनदेखी हो गई तो पूरा जीवन ही घाटे का सौदा बनकर रह जाएगा। प्रभु का आदेश पालन करते हुए वेद धर्म का प्रचार-प्रसार करने वालों के लिये 'आटे का घाटा' तो होना नहीं और इससे प्राप्त दान-दक्षिणा से टाटा कोई बनना नहीं।

इस लेख को पढ़कर अगर दस-बीस विद्वान् उपदेशक भजनोपदेशक सभा के पास अपने समय दान का प्रस्ताव भेजेंगे तो निश्चित रूप सभा-अधिकारियों के मन में उत्साह का संचार होगा। ध्यान रहे, जिस ढंग से हमारा प्रचार कार्य चल रहा है, उसमें आर्यसमाज के निर्जीव शरीर को भी ढोते रहने की सामर्थ्य नहीं दिखती। आर्यसमाज को जीवन्त रखने और सशक्त बनाकर देश-विदेश में फैलाने के लिए हमें पहली पीढ़ी के आर्यों जैसा बनना पड़ेगा। बिना निष्ठा, लगन और समर्पण के तथा बिना तप-त्याग और बलिदान के महर्षि दयानन्द के कार्य को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। मैंने संस्कृत की एक मार्मिक सूक्ति पढ़ी थी, उसमें कहा था कि जिस व्यक्ति में तेज दौड़ने की शक्ति-क्षमता हो, वह अगर एक शिशु की तरह घुटनों के बल रेंगकर चलता हो तो लोग उसकी सामर्थ्य को धिक्कारते हैं। आर्यो! आर्यसमाज की शक्ति और कार्यक्षमता को संसार भलीभाँति जानता है। महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, पं. लेखराम जैसे अमर बलिदानियों, स्वामी दर्शनानन्द, पं. चमूपति, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, स्वामी वेदानन्द, धर्मदेव विद्यामार्तण्ड और आर्यमुनि जी जैसे लेखनी और वाणी के धनी आर्यों ने संसार को आर्यों की शक्ति और सृजनशीलता से परिचित कर दिया है। उनकी शक्ति-सामर्थ्य देख चुका संसार हमारे रेंगने की प्रवृत्ति पर क्या कहेगा? सन् २०२५ में ऋषि दयानन्द की दो सौ वीं जयन्ती के साथ आर्यसमाज १५०वाँ स्थापना दिवस तथा २०२६ में श्रद्धानन्द की बलिदान शताब्दी आ रही है। विश्व को अपनी कार्यक्षमता दिखाने का हमारे पास स्वर्णिम अवसर है। आओ! हमारा आर्यत्व कसौटी पर है।

ग्राम- सूरौता, भरतपुर, राज.। मो. ९०७९०३९०८८

परोपकारिणी सभा के आगामी शिविर व कार्यक्रम

०१.	साधना-स्वाध्याय-सेवा शिविर	-	११ से १८ जून-२०२३
०२.	आर्य वीरांगना दल शिविर	-	१९ से २५ जून-२०२३
०३.	दम्पती शिविर	-	२४ से २७ अगस्त-२०२३
०४.	डॉ. धर्मवीर स्मृति दिवस	-	०६ अक्टूबर-२०२३
०५.	साधना-स्वाध्याय-सेवा शिविर	-	२९ अक्टूबर से ०५ नवम्बर-२०२३
०६.	ऋषि मेला	-	१७, १८, १९ नवम्बर-२०२३

कृपया शिविर में भाग लेने के इच्छुक शिविरार्थी पूर्व से ही प्रतिभाग की सूचना दें।

अग्नि सूक्त-४५

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्य

प्रिय पाठक! परोपकारी पिछले कई वर्षों से आपकी सेवा में डॉ. धर्मवीर जी के वेद प्रवचनों को प्रकाशित कर रही है। इसी शृंखला में ऋग्वेद के प्रथम सूक्त 'अग्निसूक्त' की व्याख्यान माला प्रकाशित की जा रही है। प्रवचनों को लेखबद्ध करने का कार्य डॉ. धर्मवीर की ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती सुयशा कर रही हैं।
-सम्पादक

राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्। वर्धमानं स्वे दमे।।

हम वेद की, वेदज्ञान की चर्चा कर रहे हैं। हमारी चर्चा का केन्द्र बिन्दु है ऋग्वेद के पहले मण्डल का पहला सूक्त। हमने इस सूक्त का विचार करते हुए सात मन्त्रों का विचार किया है। हमारे पास ८वाँ मन्त्र आज विचार के लिए प्रस्तुत है। इस मन्त्र का ऋषि मधुच्छन्दा है, इसका देवता अग्नि है और इसका छन्द गायत्री है। तो यह मन्त्र क्या कह रहा है? इस सूत्र में नौ मन्त्र हैं। नौ मन्त्रों में पाँच मन्त्र विद्या-विज्ञान की चर्चा के लिए हमने देखे। अगले जो चार मन्त्र है वो परमेश्वर की जानकारी के लिए, परमेश्वर की उपासना के लिये हम अनुभव करते हैं। इनका अर्थ हमें मालूम पड़ता है। हमने मन्त्र में देखा था- यदङ्ग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि। हमने उस मन्त्र के रूप में परमेश्वर का जो स्वभाव है, उसको जाना था, उसको समझा था कि वह कल्याण कर्त्ता है, कल्याण करना उसका स्वभाव है, लेकिन कल्याण प्राप्त किसको होता है यह मुख्य बिन्दु था और वह दाशुषे, जो समर्पण करनेवाला है, नियमों का पालन करनेवाला है, जो परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करता है, उनके अनुसार आचरण करता है। यह उसका निश्चित स्वभाव है। अर्थात् कार्य और परिणाम जुड़े हुए हैं उनको कोई अलग नहीं कर सकता है आप श्रेष्ठ काम करते हैं, कल्याण, परोपकारी का कार्य करते हैं, तो कल्याण होना अनिवार्य है। तव एतत् सत्यम्-यह निश्चित है, पक्का है, उसको कोई बदल नहीं सकता है। अगले मन्त्र में हमने उपासना के प्रकार को देखा, हम कैसे करें, हम करना चाहते हैं लेकिन करने का उपाय क्या है। इस मन्त्र में हम देखते हैं कि तीन बातों को विशेष रूप से चिह्नित किया गया है। एक है, 'अध्वराणाम् गोपा'। अध्वर एक ऐसा प्रसिद्ध शब्द है जो वैदिक साहित्य में बहुत आता है और यह यज्ञ का पर्याय है। तो अध्वर यज्ञ को कहते हैं लेकिन जैसा कि आप जानते हैं, संस्कृत का प्रत्येक शब्द किसी अर्थ के कारण से उसका नाम बनता है। अर्थात् जिस वस्तु का वो नाम है, उसमें उस शब्द का अर्थ जरुर घटित होता है, उसका वह गुण उस वस्तु में पाया जाता है, तब उस वस्तु का वह नामकरण होता है। जैसे हम जल कहते हैं, तो वह जीवन देने वाला है, जीवन को लानेवाला है इसलिए इसको जल कहते हैं। यह पृथ्वी है, यह फैली हुई है, यह विस्तृत है, पृथु है इसलिए इसको पृथ्वी कहते हैं। इसी तरह से संस्कृत शब्दों के अपने अभिप्राय, अर्थ होते हैं, यह उनकी विशेषता होती है। तो हम यहाँ देखते हैं कि यहाँ यज्ञ के लिए 'अध्वर' शब्द का प्रयोग है और इसको साथ कहा गया है कि वह इनका 'गोपा' रक्षक है। अर्थात् वह अध्वर का रक्षक है। परमेश्वर अध्वर की रक्षा करता है। तो पहले तो यह समझने की बात है कि अध्वर क्या है उसकी रक्षा करता कैसे है? हमने देखा अध्वर यज्ञ को कहते हैं। यज्ञ को

अध्वर क्यूँ कहते हैं? यज्ञ को यज्ञ क्यूँ कहते हैं यह तो हम बता सकते हैं इसका मूल शब्द 'यज्' है, उसका अर्थ संगतिकरण है। यज् का अर्थ दान है, यज् का अर्थ देवपूजा है। तो जैसे यज्ञ के यह सब अर्थ निकलते हैं, तो वैसे ही यज्ञ के पर्याय शब्द 'अध्वर' का भी अपना अर्थ होना चाहिए- तो 'ध्वर' शब्द हिंसा के अर्थ में आता है। आचार्य यास्क ने लिखा है, 'ध्वरति हिंसा कर्मा' वहाँ कर्म शब्द का मतलब होता है, 'अर्थ'। तो 'हिंसा अर्थ वाला' तो ध्वर शब्द हिंसा अर्थ वाला होता है। यदि हिंसा ध्वर का अर्थ है तो 'अ' का अर्थ होता है, निषेध। तो यह निषेध के कारण अर्थ बना 'अध्वर'। अर्थात् जिसमें हिंसा वर्जित है, जिसमें हिंसा होनी नहीं चाहिए, जो हिंसारहित है। ऐसा जो कार्य है, वो यज्ञ है। ऐसा कार्य यज्ञ क्यूँ है, यज्ञ तो आप बहुत सारे कार्यों को कहते हैं। आप सारे परोपकार के कार्यों को यज्ञ कहते हैं, तो हिंसा क्या नहीं है उसमें? वहाँ किसी का अहित नहीं है, वहाँ किसी का बुरा नहीं है। तो इसलिए वह कार्य अध्वर है। अर्थात् हम कोई भी कार्य करें, वो यज्ञ बन सकता है, वह अध्वर बन सकता है, लेकिन उसमें से ध्वर निकल जाना चाहिए। तो जो भी काम हम कर रहे हैं उसमें हिंसा नहीं होना चाए, हिंसा का भाव भी नहीं होना चाहिए, प्रयोजन भी नहीं होना चाहिए। ऐसे काम की भगवान् रक्षा करता है। ऐसे काम के लिए भगवान् हमें प्रेरित करता है, उत्साहित करता है। इसलिए वेद का शब्द आया 'अध्वराणाम् गोपा।' अर्थात् जो श्रेष्ठ कर्म हैं उनका वो रक्षा करने वाला है। हम यदि श्रेष्ठ कर्म करेंगे, तो रक्षण का दायित्व परमेश्वर का है। हम कभी-कभी ऐसा सोचते हैं कि परमेश्वर सोचता होगा कि यह आया है, इसकी रक्षा करो, ऐसा नहीं होता। नियम है कि ऐसा होने पर ऐसा ऐसा होगा। आप बुरा करेंगे तो ऐसा होगा, अच्छा करेंगे तो ऐसा होगा, क्योंकि दुनिया में कोई काम हम पहली बार नहीं कर रहे हैं। हम पहले व्यक्ति नहीं है जो इस काम को कर रहे हैं। इसलिए हमारे और परमेश्वर के बीच में अनन्तकाल से सम्बन्ध चला आ रहा है और यह असीम काल तक चलता रहेगा। किसी स्थिति में हमारी कोई भी बात ऐसी नहीं कर रहे हैं जो पहले कभी की नहीं गयी हो, अर्थात् परमेश्वर के ज्ञान विज्ञान से जो परे हो। ऐसी स्थिति में यह सोचना कि परमेश्वर जानता है कि नहीं जानता, परमेश्वर को पता है कि नहीं पता यह सोचने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती, क्योंकि जो कुछ भी होगा वो एक नियम से होगा, एक नियम के अन्तर्गत होगा और उसका परिणाम भी वैसा ही होगा, क्योंकि भगवान् के व्रत जो हैं वो बड़े निश्चित हैं, बड़े मजबूत हैं, उनको कोई भी तोड़ नहीं सकता, कोई खण्डित नहीं कर सकता इसलिए वो ऐसे जो कार्य हैं जिन्हें आप अध्वर कहते हैं, यज्ञीय कार्य कहते हैं, उनका वो रक्षा करनेवाला है। इसलिए यहाँ पर कहा अध्वराणां गोपा। गोपायिता है, उसको बचानेवाला है। इसलिए जो भी व्यक्ति अच्छा काम करता है, उसको भगवान् बचाता है, उसको भगवान् ऐसे रास्ते देता है कि उनसे वह बच ही जाता है। तो जब भी कल्याण का काम होता है, इसके लिए गीता ने एक बहुत सुन्दर पंक्ति लिखी है- नहि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति। यदि हमने थोड़ा भी किसी का भला किया है, किसी का भी उपकार किया है तो उसमें कभी भी कोई बाधा नहीं आती है, इसलिए हम परमेश्वर को सदा अच्छाईयों का रक्षक मानते हैं यहाँ उसी बात को बताने के लिए अध्वराणां गोपा पढ़ा है और वह दीदिविम्- वह दिन-दिन में राजन्तम्, बढ़नेवाला है। स्वे-दमे- अपने स्थान में। आपको बताया था 'दम' शब्द संस्कृत में घर का वाचक है। तो घर अर्थात् जहाँ वह रहता है, जहाँ निवास है। अब इसमें एक सोचने की बात है कि हम तो किसी एक स्थान विशेष में रहते हैं, छोटे से घर-मकान में रहते हैं और उस घर को हम अपना मानते हैं, अपना अधिकार मानते हैं और इसलिए उसे अपना मानते हैं। किन्तु हम एक बात और अनुभव करते हैं कि जिस घर में जो पहले से विद्यमान है, रह रहा है, हम यह देखते हैं

कि वही उसका स्वामी होता है, वही उसका मालिक होता है, वही उसे अपना कहता है। तो ऐसी स्थिति में यदि हम, परमेश्वर कहाँ रहता है, यह अनुभव करेंगे कि परमेश्वर समस्त संसार में रहता है। परमेश्वर इस संसार में भी रहता है और संसार से बाहर भी रहता है। इसलिए परमेश्वर के बिना कोई भी स्थान अतिरिक्त नहीं है और यह स्थिति यदि हम स्थान में देखते हैं, तो स्थान में पहले रहता है वो स्वामी बन जाता है, वो स्वामी होता है, वो स्वामी कहलाता है। तो ऐसी स्थिति में सारा संसार परमेश्वर के स्वामित्व में आएगा। वो उसका स्वामी होगा। हमारे लिए तो बहुत संकट हो जाएगा कि संसार में हमारा कुछ भी नहीं रहेगा हमारे लिए कुछ नहीं है, ऐसी स्थिति में हमारी परिस्थिति क्या बनेगी? यह हमारे सामने प्रश्न पैदा होता है, लेकिन हम एक बात जानते हैं कि परमेश्वर को अपने लिए कुछ भी नहीं चाहिए, उसको कोई भौतिक आवश्यकता नहीं है। हमारी आवश्यकता हमारी एक कमी के कारण, एक दुर्बलता के कारण संसार में हमें आवश्यकता पड़ती है। हम चेतन हैं, परमेश्वर भी चेतन है। उसमें ज्ञान है, हममें भी ज्ञान है, उसमें सामर्थ्य और शक्ति है, हमारे पास भी है, किन्तु अन्तर इतना सा है- वो सर्वव्यापक है, इसलिए उसका ज्ञान पूर्ण है और हम एक देशी हैं, इसलिए हमारा ज्ञान सीमित है। इस बात को समझाने के लिए योगदर्शन का एक सूत्र कहता है- जो हमारे गुणों की अतिशयता है, पराकाष्ठा है, जो ऊँचाई है, सबसे ऊँचा स्थान है वो ईश्वरत्व का कारण बनता है। अर्थात् शक्ति मेरे पास है, लेकिन अतिशय शक्ति नहीं है। मेरे पास जो शक्ति है वो लाखों, करोड़ों के पास है। मेरे पास जो ज्ञान है वो भी करोड़ों लाखों के पास है। मेरे पास जो बल है, कर्म है उतना सामर्थ्य भी औरों के पास है। इसलिए मेरे पास अतिशयता नहीं है, इसलिए ईश्वरत्व भी न ही आता। तो ईश्वरत्व के लिए सम्पूर्णता चाहिए ईश्वरत्व के लिए सबसे अधिकता चाहिए, अतिशयता चाहिए। तो इसलिए उसके पास जो ज्ञान बल कर्म है वो मेरे पास नहीं होने से मुझे उसकी अपेक्षा रहती है और इस अपेक्षा के लिए मुझे संसार में आना पड़ता है, शरीर धारण करना पड़ता है, शरीर से संसार का लाभ उठना पड़ता है। तो इस दृष्टि से हम विचार करते हैं तो जो आवश्यकता मेरी है, जिन वस्तुओं की आवश्यकता मुझे है वह आवश्यकता न तो परमेश्वर के पास है, न कभी आवश्यकता पड़ सकती है। न तस्य कार्यं करणं च विद्यते, न तत् समश्चाप्यधिकश्च दृश्यते। परास्य शक्तिः विविधैव श्रूयते, स्वाभाविक ज्ञान बल क्रिया च। उपनिषद्कार कहते हैं कि परमेश्वर ज्ञान, उसका बल, उसकी क्रिया स्वाभाविक है, उसकी आवश्यकता से प्ररित नहीं है। इसलिए हमारी उसकी कोई तुलना नहीं है, हमारी उसकी कोई प्रतिद्वन्द्विता नहीं है, स्पर्धा नहीं है कि उसे हमारी चीजों से कोई काम पड़े। ऐसी स्थिति में जो कुछ है वह किसके लिए होगा? परमेश्वर यहाँ रहता है, यह सबकुछ उसका है, लेकिन उसके काम का तो नहीं है, उसके उपयोग का भी नहीं है तो यह जीवात्मा के उपयोग का है। तब हम नहीं कह सकते कि परमेश्वर के लिए संसार बना हुआ है संसार मनुष्य के लिए बना है और वह मनुष्य के उपयोग में आने वाला है तो उसका उपयोग कैसे करना चाहिए यह यहाँ बताया गया है। जिस स्थान पर भी आप रह रहे हैं, वो पहले आप यह मान कर चलें जान कर चलें कि यह परमेश्वर का स्थान है, यहाँ पर परमेश्वर विद्यमान है तो आपकी जो क्रिया है- जब आप अकेले किसी घर में रहते हैं, तब आप कैसे रहते हैं। आप किसी के साथ जब रहते हैं, आप कैसे रहते हैं। अपने से छोटे के साथ कैसे रहते हैं तब कैसे रहते हैं और अपने बड़े के साथ रहते हैं, तब कैसे रहते हैं। जिस दिन आप अपने घर में यह अनुभव करने लगेंगे कि मैं परमेश्वर के साथ रहता हूँ और उस परमेश्वर के साथ रहता हूँ जो संसार में सबसे बड़ा है। तो उस समय मेरे रहने की जो स्थिति है, वो बदल जाती है। उसकी उपस्थिति से मैं अपने को सुरक्षित अनुभव करता

हूँ, अपने को प्रकाशित, ज्ञानवान अनुभव करता हूँ और उस उपस्थिति के कारण मैं अपराध से बचने की स्थिति में अपने को पाता हूँ, क्योंकि कोई भी व्यक्ति प्रकाश में अपराध नहीं करता, जानकारी अपने से बड़ों की उपस्थिति में अपराध नहीं करता, जानकारी मिलने पर अपराध की ओर प्रवृत्त नहीं होता। तो इस दृष्टि से परमेश्वर की उपस्थिति के साथ मेरी उपस्थिति मेरे लिए हानिकर नहीं है, लाभदायक है। जो चीज ढूँढ़ने के लिए मुझे बाहर जाना पड़ता, परमेश्वर स्वयं वहीं आ कर दे रहा है। मुझे रखने से उसने इन्कार नहीं किया है, उसका घर बना ही मेरे लिए है। ऐसी स्थिति वह मुझे बाहर कैसे निकाल सकता है, निकलूँगा तो मेरी भूल से या मेरी मर्जी से। तो ऐसी स्थिति में वह क्या करता है, 'स्वे दमे वर्धमानम्' मैं उसे जब घर के अन्दर देखता हूँ तो कोई जगह ऐसी नहीं मिलती जहाँ उसकी उपस्थिति न हो। जिधर देखता हूँ, बढ़ा हुआ दिखाई देता है। तो चाहे आगे देखूँ, पीछे देखूँ, दायें देखूँ, बायें देखूँ, तो जहाँ भी देखता हूँ उसका तेजस्वी रूप ही मुझे दिखाई देता है। सर्वव्यापकत्व ही दिखाई देता है, उसका सज्ञान रूप दिखाई देता है। समस्त कर्मों का अधिष्ठाता रूप दिखाई देता है। अतः यहाँ एक शब्द का प्रयोग किया, 'वर्धमानम् स्वे दमे'। वह अपने तेज से बढ़ते हुए प्रतीत होता है। अर्थात् जहाँ भी हम देखें उसकी उपस्थिति हमें दिखाई देती है। हमने पहले शब्द के रूप में देखा कि वह यज्ञ श्रेष्ठ कर्म है उसका रक्षक है, सम्पादक है, सहायक है। वह अपनी उपस्थिति से हमें चमत्कृत करनेवाला है, हमें मार्गदर्शन देने वाला है, हमारी सुरक्षा करनेवाला है। इसलिए उस घर में जब हम रहेंगे जिसमें हमारी सुरक्षा करने वाला, जिसमें ज्ञान का देने वाला रहता है तो ऐसा घर हमारे लिए सुरक्षा, आनन्द, सुख का कारण बनेगा। तो यहाँ पर हमने दो शब्दों के माध्यम से देखा-अध्वराणां गोपा- वह अध्वर का रक्षक है और उसके साथ हमने दूसरी बात देखी, वर्धमानं स्वे दमे- वह प्रतिदिन तेजस्विता से बढ़ने वाला है। जब हम इन दोनों गुणों को अनुभव करेंगे तो हमें यह स्थिति अपने लिए लाभदायक होती हुई दिखाई देगी। यह इस मन्त्र का विशेष अभिप्राय है।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में कई वर्ष से संचालित आयुर्वैदिक चिकित्सालय का पुनः आरम्भ २६ अगस्त को किया गया है। यह चिकित्सालय सोमवार को छोड़ सप्ताह में ६ दिन मार्च से अक्टूबर सायं ५ से ७ बजे तक व नवंबर से फरवरी सायं ४ से ६ बजे तक दो घण्टे खुलेगा।

इसमें वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक की सेवा उपलब्ध है। चिकित्सा परामर्श व चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। यदि आप अपने धन को इस पुण्य कार्य में लगाना चाहते हैं, तो परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सहयोग भेज सकते हैं। सहयोग भेजकर ८८९०३१६९६१ पर सूचित अवश्य कर देवें।

- मन्त्री

विद्वान् स्त्रियों को योग्य है कि अच्छी परीक्षा किए हुए पदार्थ को जैसे आप खायें वैसे ही अपने पति को भी खिलावें कि जिससे बुद्धि, बल और विद्या की वृद्धि हो और धनादि पदार्थों को भी बढ़ाती रहें।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४२

ऋषि दयानन्द-द्विजन्मशताब्दी लेखमाला-(१)

[स्वाध्याय-शोध और समीक्षा]

ऋषि दयानन्द के जन्म का वर्ष १८२५ ई. है

डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

ऋषि दयानन्द ने स्वलिखित जन्मचरित्र में लिखा था- ''संवत् १८८१ के वर्ष में मेरा जन्म दक्षिण गुजरात प्रान्त काठियावाड़ का मजोकठा देश, मोर्वी का राज्य, औदीच्य ब्राह्मण के घर में हुआ था।''

[आत्मकथा, दयानन्द सरस्वती, वैदिक पुस्तकालय (अजमेर), पृष्ठ ७ तथा २१, १९८३ ई.] ऋषि दयानन्द-लिखित 'आत्मकथा' की मूलप्रति देवेन्द्रबाबू को नहीं मिल सकी थी। उन्हें इसके अंग्रेजी अनुवाद से सन्तोष करना पड़ा , जिसकी पहली किश्त १८७९ ई. के अक्टूबर मास में 'थियोसोफिस्ट' पत्र में छपी थी। इस पत्र की सम्पादिका मैडम एच.पी. ब्लैवेद्स्की थीं। अंग्रेजी अनुवाद का पाठ इस प्रकार था-

''It was in a Brahmin family of the Audichya caste in a town belonging to the Rajah of morwee, in the province of kathiawar, that in the year of samvat, 1881, (1824 A.D.)।'' स्पष्ट है कि स्वामी जी ने अपने जन्म के वर्ष का उल्लेख संवत् (विक्रम) के रूप में किया था, ईस्वी सन् के रूप में नहीं। स्वामी जी की पुस्तकों तथा पत्रों में भी विक्रमी संवत् का ही उल्लेख है, ईस्वी सन् का नहीं, 'पत्र-विज्ञापन' के कुछेक अपवादों को छोड़कर। जाहिर है कि 'संवत् १८८१' का पाठ ऋषि का था। अंग्रेजी अनुवाद में अनुवादक ने '१८२४ ई.' को अपनी ओर से जोड़ दिया। इस 'थिसोफिस्ट' पत्र में प्रकाशित '१८२४ ई.' का ही प्रचार-प्रसार सर्वत्र हो गया। ईस्वी सन् का सर्वत्र प्रचलन होने से १८२४ ई. का ही प्रचार-प्रसार सर्वत्र होने लगा। जो लोग (यथा- आदित्यमुनि जी) यह कहते हैं कि 'ऋषि दयानन्द के प्राय: सभी जीवनी लेखक उत्तर भारतीय थे अत: देवेन्द्रबाबू और पं. लेखराम के कारण १८२४ ई. का प्रचार-प्रसार हो गया और इन्हीं लोगों ने उत्तर भारतीय चैत्री विक्रम संवत् का भी प्रचार-प्रसार कर दिया।'

यह कथन पूरी तरह असत्य है, क्योंकि देवेन्द्रबाबू को ऋषि के 'आत्मकथा' की मूलप्रति मिली ही नहीं उन्हें 'थियोसोफिस्ट' में प्रकाशित अंग्रेजी अनुवाद पर निर्भर रहना पड़ा। देवेन्द्रबाबू के शब्द हैं- ''आर्यभाषा में जो आत्मचरित मिलता है वह उसी का अंग्रेजी अनुवाद है।...यह पता नहीं लग सकता कि आर्यभाषा के असली आत्मचरित का क्या हुआ और कहाँ गया? सुनते हैं वह परोपकारिणी सभा में सुरक्षित है, परन्तु कई बार यत्न करने पर भी उक्त सभा के किसी कर्मचारी या अधिकारी ने कुछ भी पता नहीं दिया।'' [देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, ऋषि दयानन्द का जीवन-चरित, भाग-२] ऋषि दयानन्द की 'आत्मकथा' (आर्यभाषा में लिखित) की मूलप्रति पं. भगवद्दत्त जी को संवत् १९७४ वि. में गुरुकुल कांगड़ी के वार्षिकोत्सव के अवसर पर प्रो. रामदेव जी (आचार्य-गुरुकुल कांगड़ी) से प्राप्त हो गई। प्रो. रामदेव जी ने इसकी प्रति स्वामी श्रद्धानन्द जी से प्राप्त की थी। [द्र.-पं. भगवद्दत्त-ऋषि दयानन्द लिखित वा कथित जन्मचरित्र, पृ. ६, रामलाल कपूर ट्रस्ट, दशम संस्करण, १९८६ ई.] प्रो. भवानीलाल भारतीय को ''परोपकारिणी [सभा] के पुराने कागजों में वैदिक यन्त्रालय के (स्वामी जी के समकालीन) प्रबन्धकर्त्ता मुन्शी समर्थदान के बस्तों में स्वामीजी के आत्मवृत्तान्त की मूल पाण्डुलिपि दो किस्तों में प्राप्त हुई।'' ['आत्मकथा', दयानन्द सरस्वती, सम्पादक-डॉ. भवानीलाल भारतीय, पृ. ४, प्रकाशक वैदिक पुस्तकालय, अजमेर, सन् १९८३ ई.]

अत: ऋषिदयानन्द के जन्म का ईस्वी वर्ष १८२४ के प्रचार-प्रसार का मूल उत्स कर्नल अल्कॉट और मैडम ब्लैवेट्स्की की 'थियोसोफिकल' (Theosophist) पत्रिका है। इसमें प्रकाशित '१८२४ ई.' का ही अनुकरण

पं. लेखराम तथा पं. देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय ने किया। जहाँ तक १८८१ विक्रम संवत् के उत्तर भारतीय चैत्री विक्रमसंवत् समझने का प्रश्न है, वह ठीक ही है। ऋषि के सभी जीवनीकारों ने ऐसा ही ठीक समझा है और यही उचित भी है। इसको हम इस लेखमाला की अगली कड़ियों में सिद्ध कर देंगे। अस्तु, प्रकृत: अनुसराम:। स्वामी दयानन्द तथा उनके बाद भी पचासों वर्षों तक प्राय: भारतीय मनीषी विक्रम संवत् का ही प्रयोग करते रहे हैं। हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध समालोचक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में सर्वत्र विक्रम संवत् का प्रयोग किया है, ईस्वी सन् का प्रयोग नहीं किया। ऋषि दयानन्द के अनुयायी स्वामी श्रद्धानन्द तथा महात्मा नारायण स्वामी ने भी 'जन्मतिथि' के रूप में अपनी 'आत्मकथा' में तिथि-संवत् विक्रमी ही प्रयोग किया, अंग्रेजी तारीख (दिनांक) तथा ईस्वी सन् का बिल्कुल नहीं उल्लेख किया। द्रष्टव्य- ''संवत् १९१३ विक्रमी, मास फाल्गुन, कृष्ण त्रयोदश के दिन मेरा जन्म हुआ।'' [कल्याणमार्ग का पथिक-स्वामी श्रद्धानन्द, पृ. ९, प्रकाशक श्री घूड़मल प्रह्लाद कुमार आर्य धर्मार्थ न्यास, हिण्डौनसिटी, राजस्थान, २०१५ ई.।] महात्मा नारायण स्वामी जी ने भी अपनी 'आत्मकथा' में लिखा है- ''माघ सुदी ५ (वसन्त) संवत् १९२२ वि. को मेरा जन्म हुआ था।'' [महात्मा नारायण स्वामी जी की आत्मकथा, पृ. २८, प्रकाशक- वही, २०२०ई.]

वस्तुस्थिति यह है कि प्रत्येक विक्रम संवत् का लगभग ०९-१० मास ईस्वी सन् के जिस वर्ष में रहता है, उसी ईस्वी सन् के वर्ष में उसका शेष लगभग दो-तीन मास नहीं रहता। उदाहरणार्थ- २०७९ विक्रमी संवत् का प्रारम्भ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा शनिवार को हुआ, उस दिन ०२ अप्रैल २०२२ ई. थी। १ जनवरी २०२२ ई. से लेकर १ अप्रैल २०२२ ई. तक के तीन मास के काल में विक्रम संवत् २०७८ था २०७९ नहीं। इसी प्रकार २०८० विक्रमी का प्रारम्भ २२ मार्च २०२३ ई. को हुआ है और २०८० विक्रमी संवत् की समाप्ति २०२४ ई. के ८ अप्रैल को होगी। अत: जो जातक १ जनवरी से ८ अप्रैल के मध्य उत्पन्न होगा, उसके जन्म का विक्रमी संवत् तो २०८० रहेगा लेकिन ईस्वी सन् २०२३ ई. न होकर २०२४ ई. हो जाएगा। यही स्थिति स्वामी दयानन्द सरस्वती के जन्म के विक्रमी सं. तथा ईस्वी सन् के सम्बन्ध में समझनी चाहिए। स्वामी जी का जन्म १८८१ विक्रमी संवत् में हुआ था, किन्तु **मास फाल्गुन कृष्ण पक्ष तथा तिथि दशमी थी, जो ईस्वी सन् के अनुसार १२ फरवरी १८२५ ई. थी, दिन शनिवार था।** जो लोग ऋषि की जन्मतिथि १२ फरवरी १८२४ ई. लिख रहे हैं, वे इन सब बारीकियों से अनजान हैं, क्योंकि १२ फरवरी १८२४ ई. को विक्रमी संवत् १८८० वि. तिथि माघ शुक्ल १२-१३ थी और स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने जन्म का विक्रमी संवत् १८८१ लिखा है, १८८० वि.सं. नहीं।

स्वामी दयानन्द ने अपनी लिखित 'आत्मकथा' में केवल विक्रमी संवत् १८८१ का उल्लेख किया है, न तो मास और तिथि बताई और न कोई ईस्वी सन् का ही उल्लेख किया। अत: १८८१ विक्रम संवत् के मास और तिथि का निश्चय करने के लिए 'सार्वदेशिक धर्मार्य्य सभा' ने १९५६ ई. से लेकर १९६० ई. तक गम्भीरतापूर्वक विचार-विमर्श करके जो तिथि निश्चित की, वह तिथि फाल्गुन कृष्ण पक्ष दशमी, (दक्षिणात्यों अथवा गुजराती के अनुसार माघ कृष्ण पक्ष दशमी) शनिवार १८८१ विक्रमी संवत् तदनुसार १२ फरवरी १८२५ ई. की अंग्रेजी तारीख थी। इस सम्बन्ध में हम यहाँ सार्वदेशिक धर्मार्य्य सभा के प्रधान मन्त्री आचार्य विश्वश्रवा व्यास का वक्तव्य प्रस्तुत कर रहे हैं-

''महर्षि की जन्मतिथि के सम्बन्ध में सार्वदेशिक धर्मार्य्य सभा में ता. २५-०५-१९५६, ता. २७-०१-५७, ता. ०८-०६-५८, ता. २३-०७-६० इतने काल तक गम्भीरतापूर्वक विचार हुआ। उन दिनों श्री स्वामी आत्मानन्द जी सरस्वती सार्वदेशिक धर्मार्य्य सभा के प्रधान थे, और मैं [अर्थात्-आचार्य विश्वश्रवा:] स्वयं प्रधानमन्त्री धर्मार्य्य सभा का था।...महर्षि की 'आत्मकथा' में वर्णित महर्षि की स्वलिखित जीवन घटनाओं को ज्योतिष के आधार पर विचार करने पर जो तिथि निश्चित हुई, वह...सार्वदेशिक

सभा के अन्तरङ्ग ता. ०२-०४-१९५७ की बैठक में घोषित की गई, वह है- ऋषि की जन्मतिथि संवत्-१८८१ फाल्गुन बदि दशमी (१२ फरवरी सन् १८२५ ई., शनिवार)-आचार्य विश्वश्रवा: व्यास।'' ['आर्यमित्र' का महर्षि मोक्ष प्राप्ति विशेषांक, कार्त्तिक कृष्ण अमावस्या संवत् २०२९ वि., ५ नवम्बर १९७५ ई., पृ. ७३।]

अत: ऋषिलिखित 'आत्मकथा' में आर्यभाषा में लिखित 'संवत् १८८१' (विक्रमी) का अंग्रेजी भाषा में अनूदित करते समय १८२४-१८२५ ई. का उल्लेख इस 'थियोसोफिस्ट' पत्र की सम्पादिका मैडम ब्लैवेट्स्की को करना चाहिए था। उनकी इस अनवधानता के कारण मात्र १८२४ ई. के उल्लेख से अग्रिम जीवनी-लेखकों में भ्रम फैला और १९६०ई. तक लिखे सभी ऋषि-जीवनियों में १८८१ विक्रमी संवत् के साथ-साथ १८२४ ई. का प्रचार-प्रसार हो गया। सर्वप्रथम सार्वदेशिक धर्मार्य्य सभा और सार्वदेशिक (अन्तरङ्ग) सभा द्वारा फाल्गुन बदि दशमी की तिथि निश्चित होने के कारण तदनुसार १२ फरवरी १८२५ ई. का लेखन/प्रयोग/वा प्रचलन हो सका।

यही गलती स्वामी श्रद्धानन्द जी तथा महात्मा नारायण स्वामी के जीवनी लेखकों ने की है। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अपनी जन्मतिथि १९१३ विक्रम संवत्, फाल्गुन मास, कृष्ण पक्ष -१३ त्रयोदशी लिखी थी, जो ईस्वी सन् के अनुसार १८५७ ई., २२ फरवरी, रविवार होता है। किन्तु स्वामी श्रद्धानन्द के जीवनी-लेखकों ने या उन पर केन्द्रित वक्तव्यों में स्वामी श्रद्धानन्द का जन्म १८५६ ई. लिखा है। यथा- १. ''महात्मा मुंशीराम का जन्म १८५६ ई. को जालन्धर जिले के तलवन नाम के कस्बे में हुआ। ['आर्यसमाज का इतिहास' (इन्द्र विद्यावाचस्पति), द्वितीय भाग, पृ. ६, प्रकाशक-सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली, १९५७ ई.]''

२. ''सन् १८५६ फरवरी (फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी संवत् १९१३) को तलवन ग्राम (जालन्धर) में श्री नानकचन्द जी क्षत्रिय के घर में जन्म।''

['स्वामी श्रद्धानन्द' (पं. सत्यदेव विद्यालंकार) सम्पादक-विनोदचन्द्र विद्यालंकार, पृ. ३७७, प्रकाशक-हितकारी प्रकाशन समिति, हिण्डौन सिटी (राजस्थान) सन् २०१८ ई.]

महात्मा नारायण स्वामी जी ने अपनी 'आत्मकथा' में अपनी जन्मतिथि-माघ सुदी ५ (वसन्त) संवत् १९२२ लिखी थी। किन्तु उन पर लिखे गये पुस्तकों/विशेषाङ्कों में उनका जन्म ईस्वी सन् के अनुसार १८६५ ई. लिखा गया है। ['स्वस्ति पन्था' का महात्मा नारायण स्वामी जन्मदिवस विशेषांक, पृ. ४ तथा १२, जनवरी-फरवरी २०२२ ई. संयुक्तांक, प्रकाशक-आर्य विरक्त (वानप्रस्थ+संन्यास) आश्रम, ज्वालापुर, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)।]

जबकि १९२२ विक्रम संवत् में माघ मास में वसन्तपंचमी को १८६६ ई. में २१ जनवरी को रविवार का दिवस था।

इस प्रकार की गलतियाँ इसलिए हो जाती हैं कि विक्रम संवत् में ५७ वर्ष घटाकर ईस्वी सन् लेखक महानुभाव लिख देते हैं। होना यह चाहिए कि यदि विक्रम संवत् के प्राय: माघ वा फाल्गुन की कोई तिथि हो तो विक्रम संवत् से ५६ वर्ष घटाना चाहिए। अब तो विगत १००-२०० वर्षों का पंचांग उपलब्ध (प्रकाशित वा मुद्रित) है, जिससे सहजता से सन्-संवत् में समुचित परिवर्तन का ज्ञान हो जाता है। इसी भांति अधिकांश लेखकों ने स्वामी दयानन्द के जन्म संवत् १८८१ विक्रमी में ५७ वर्ष घटाकर ईस्वी सन् के अनुसार १८२४ ई. लिख दिया है। वस्तुत: होना यह चाहिए कि स्वामी दयानन्द का जन्म फाल्गुन मास में कृष्ण पक्ष की दशमी तिथि (दयानन्द-दशमी) को हुआ था। अत: १८८१ वि.सं. में ५६ वर्ष ही घटा कर १८२५ ई. लिखा जाना चाहिए। अंग्रेजी तारीख के अनुसार उस दिन शनिवार १२ फरवरी १८२५ ई. थी। अलमति विस्तेरण बुद्धिमद्वर्येषु। 'ऋषि दयानन्द-द्विजन्मशताब्दी लेखमाला' की अगली कड़ियों में इसी प्रकार के शोधपूर्ण लेखों को प्रस्तुत किया जाएगा।

क्रमश:

चाणक्यपुरी, अमेठी, उ.प्र.

जन कल्याण के लिए वैदिक-विज्ञान

डॉ. रामनाथ वेदालंकार

विज्ञान मनुष्य के लिए एक स्वाभाविक आवश्यकता है। हम संघर्षण द्वारा अग्नि उत्पन्न करते हैं, कोयलों पर रोटी को फुलाते हैं, बारूद से पर्वत खण्डों को तोड़ते हैं, नल द्वारा पानी को ऊँचाई पर ले जाते हैं, कूप से पानी खींचने के लिए चरखी का उपयोग करते हैं, सिंचाई के लिए ढेंकली लगाते हैं, शीत में ऊनी वस्त्र पहनते हैं, पर्वत पर चढ़ते समय शरीर को झुका लेते है, इत्यादि हमारी छोटी-छोटी क्रियाओं में भी विज्ञान के नियम काम करते हैं, भले ही हमारा उनकी ओर ध्यान न जाता हो। मनुष्य विज्ञान के बिना पंगु है। विज्ञान द्वारा ही वह हिंसक जन्तुओं तथा शत्रुओं से रक्षार्थ शस्त्रास्त्रों का निर्माण करता है, शीघ्रता से स्थानान्तर पर पहुँचने के लिए यानों को रचता है, रुग्ण होने पर स्वास्थ्य लाभ के उपायों का आविष्कार करता है, विविध विद्याओं की उन्नति के लिए यन्त्र बनाता है, उपयोगी वस्तुओं को उत्पन्न करने के लिए कारखाने निर्मित करता है। वेदों में जिस प्रकार धार्मिक, राजनीतिक आदि क्षेत्रों में उन्नति करने के लिए प्रेरणाएं दी गयी हैं, उसी प्रकार वैज्ञानिक क्षेत्र में प्रगति के लिए भी वेद हमें प्रेरित करते हैं, यद्यपि इतना अवश्य है कि वेद की दृष्टि में विज्ञान का उपयोग जनकल्याण के लिए होना चाहिए। यहाँ हम वेदों में उल्लिखित कुछ वैज्ञानिक बातों की चर्चा करेंगे।

व्योमयान

वेदों में व्योमयान से आकाश में उड़ने का उल्लेख कई स्थानों पर हुआ है। ऋग्वेद में एक ऐसे रथ का वर्णन किया गया है, जिसमें न घोड़ा है, न लगाम है, जो तीन पहियों से चलता है तथा आकाश में भ्रमण करता है-

अनश्वो जातो अनभीशुरुक्थ्यो
रथस्त्रिचक्रः परिवर्तते रजः। ऋग् ४/३६/१

एक अन्य स्थान पर सैनिकों को प्रेरणा की गई है कि तुम ऐसे व्योमयानों पर स्थित होकर पक्षियों के समान उड़ो, जो विद्युत् से चलते हों, जिनके विशाल पंख हों तथा जिनमें शस्त्रास्त्र एवं आवश्यक खाद्य-सामग्री निहित हो-

आ विद्युन्मद्भिर्मरुतः स्वर्कै
रथेभिर्यात ऋष्टिमद्भिरश्वपर्णैः।
आ वर्षिष्ठया न इषा
वयो न पप्तता सुमायाः।।

ऋग् १/८८/१

ऋग्वेद के दशम मण्डल में कपोत नामक एक व्योमयान का वर्णन हैं जैसे आजकल व्योमयानों के नाम राजहंस आदि रख लिये जाते है। दूसरे देश का दूत होकर एक कपोत किसी अन्य देश में पहुँचा है। उस देश के वासी उसका स्वागत करते हुए कहते हैं कि दूसरी भूमि का दूत जो यह कपोत हमसे कुछ चाहता हुआ हमारी भूमि में आया है, उसका हम सत्कार करते हैं-

देवाः कपोत इषितो यदिच्छन्
दूतो निर्ऋत्या इदमाजगाम।
तस्मा अर्चाम कृणवाम निष्कृतिं
शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे।।

ऋग् १०/१६५/१

यह ठीक वैसा ही प्रसंग है, जैसे हमारे पड़ोसी देश पाकिस्तान का कोई यान (यानारोही दल) किन्हीं समस्याओं पर वार्तालाप करने के लिए हमारे देश में आये। जैसे इस मन्त्र में पक्षिविशेष कबूतर वाची कपोत शब्द विमान के लिए प्रयुक्त किया है, वैसे ही अन्यत्र पक्षिसामान्य वाची 'वि' शब्द आता है।

वेदा यो वीनां पदमन्तरिक्षेण पतताम्।
वेद नावः समुद्रियः। ऋग् १/२५/७

यहाँ वरुण की स्तुति में कहा गया है कि वह आकाश में उड़नेवाले विमानों तथा समुद्र में चलने वाली नौकाओं को जानता है। नौकाओं की तुलना में पक्षिवाची 'वि' शब्द का विमान अर्थ करने में ही अधिक औचित्य है।

जलयान

जलयान के प्रयोग का उपदेश देने के लिए वेद में 'अश्विनौ' द्वारा व्यापारी भुज्यु को समुद्र पार ले जाने का एक काल्पनिक कथानक मिलता है। तुग्र एक राजा है, वह अपने देश के व्यापारी भुज्यु तथा उसके साथियों को जलपोतों द्वारा देशान्तर में भेजता है। पोतचालक अश्वी निरन्तर तीन दिन-रात जलयात्रा कराते हुए उन्हें सुरक्षित पार पहुँचा देते हैं-

तुग्रो ह भुज्युमश्विनोदमेघे रयिं न कश्चिन्ममृवाँ अवाहाः।

त मू ह थु नौ भि रा त्म न्व ती भि: अन्तरिक्षप्रुद्भिरपोदकाभिः।।

तिस्रः क्षपस्त्रिरहातिव्रजद्भिनासित्या भुज्युमूहथुः पतङ्गैः।

समुद्रस्य धन्वन्नार्द्रस्य पारे त्रिभी रथैः शतपद्भिः षळश्वैः।।

ऋग् १/११६/३/४

यहाँ नौकाओं या जलपोतों की विशेषता बतानेवाले उनके कुछ विशेषण प्रयुक्त हुए हैं। 'अन्तरिक्षप्रुद्' से सूचित होता है कि वे जलपोत बिना डूबे पानी के ऊपर-ऊपर चलते हैं। 'अपोदक' से आशय है कि उन पर पानी का प्रभाव नहीं होता, अर्थात् वे 'वाटरप्रूफ़' हैं। वे पतंग हैं, अर्थात् वेग के कारण ऐसा प्रतीत होता है कि वे पानी के ऊपर उड़े चले जा रहे हैं। वे शतपद् भी हैं, क्योंकि उनमें चलाने-रोकने आदि के लिए अनेक कलें लगी हुई है। ६ इंजनोंवाले होने के कारण वे षडश्व हैं। इस प्रसंग में आये तुग्र, भुज्यु एवं अश्विनौ शब्द भी यौगिक हैं। राजा के अर्थ में आया तुग्र शब्द 'तुजि हिंसाबलादाननिकेतनेषु' धातु से औणादिक रक् प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है। इससे राजा का शत्रुहिंसक, बली, संग्रहशील आदि होना सूचित होता है। 'भुज्यु' का अर्थ है भोग्य पदार्थों की इच्छा करनेवाला, यहाँ इच्छ अर्थ में क्यच् प्रत्यय हुआ है। अश्विनौ का अर्थ है अश्वों वाले या गतिवाले अर्थात् चालक।

एक अन्य मन्त्र में ऐसे यान का उल्लेख है, जो पनडुब्बी की तरह समुद्र के अन्दर भी चल सकता है तथा आवश्यकतानुसार पक्षी के समान आकाश में भी उड़ सकता है। इसे भी अश्विनौ ने तुग्र के पुत्र भुज्यु के उपयोग के लिए रचा है-

युवमेतं चक्रथुः सिन्धुषु प्लवम्
आत्मन्वन्तं पक्षिणं तौग्र्याय कम्।

ऋग् १/१८२/५

जल के घटक तत्त्व

आधुनिक विज्ञानवेत्ता प्रयोगशाला में परीक्षण करके दिखाते हैं कि जल घटक तत्त्व ऑक्सीजन तथा हॉइड्रोजन नामक दो गैसें हैं। उनमें विद्युत् धारा प्रवाहित करने से जल उत्पन्न हो जाता है तथा विद्युत् द्वारा जल को फाड़ने पर वह उक्त गैसों में विभक्त हो जाता है। यह रहस्य निम्न वेदमन्त्र में वर्णित है।

मित्रं हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसम्।
धियं घृताचीं साधन्ता।। ऋग् १/२/७

इसमें उक्त दो गैसों को क्रमशः मित्र तथा वरुण नाम दिया गया है। जल के लिए घृत शब्द प्रयुक्त हुआ है-

घृतमित्युदकनाम जिघर्तेः सिञ्चिति कर्मणः

निरुक्त ७/२४

अथर्व वेद में एक स्थान पर वर्षा को मित्र और वरुण से मिलकर बना हुआ कहा गया है-

न वर्षं मैत्रावरुणं ब्रह्मज्यमभिवर्षति,

अथर्व ५/१९/१५

ऋग्वेद के इस मन्त्र में वसिष्ठ को मित्र एवं वरुण से उत्पन्न तथा उर्वशी के मन से अधिजात कहा है। यहाँ भी

वसिष्ठ से वर्षा की बून्द अभिप्रेत है और मित्र-वरुण उक्त दो वायुएं तथा उर्वशी विद्युत् है-

उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठ
उर्वश्या ब्रह्मन् मनसोऽधिजातः।

ऋग् ७/३३/११

वर्षा कराना

कभी-कभी वर्षा की महती आवश्यकता होने पर भी वर्षा नहीं होती या तो बादल आ-आकर चले जाते हैं, या आते ही नहीं। ऐसी अवस्था में वर्षा कराने के उपायों का आविष्कार करने में वर्तमान विज्ञान संलग्न है। वैज्ञानिक ऐसे परीक्षण कर रहे हैं कि विमान द्वारा ऊपर पहुँचकर आकाश में कुछ पदार्थ छिड़कने से बादलों को बरसाया जा सके। अभी यह कार्य कुछ असम्भव तो नहीं, किन्तु अतिव्ययसाध्य समझा जा रहा है, परन्तु वेद में मन्त्र द्वारा कृत्रिमरूप से वर्षा कराने का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद के वृष्टिकाम सूक्त में देवापि आर्ष्टिषेण यज्ञ के वैज्ञानिक प्रयोग द्वारा उत्तर समुद्र (आकाश) से अधर समुद्र की ओर जल बरसाने में सफल होता है-

आर्ष्टिषेणो होत्रमृषिर्निषीदन्
देवापिर्देवसुमतिं चिकित्वान्।
स उत्तरस्मादधरं समुद्र
मपो दिव्या असृजद् वर्ष्या अभि।

ऋग् १०/९८/५

अगले मन्त्र में स्पष्ट कहा है कि आकाश में जल देवों द्वारा रुके हुए स्थित हैं, अर्थात् ऐसी परिस्थिति है कि बादल छाये हुए हैं, किन्तु वृष्टि नहीं होती, तब देवादि अपनी कला से उन्हें बरसा देता है। इस सूक्त के अन्तिम मन्त्र में अग्नि को सम्बोधन कर कहा है कि तुम राक्षसों को अर्थात् वृष्टि में बाधक भौगोलिक परिस्थिति को विनष्ट कर प्रचुर जलों को बरसा दो। आज भले ही इस विज्ञान से हम पूर्णतः परिचित न हों, पर वेद से प्रेरणा लेकर हम इस दिशा में प्रगति कर प्रकृति पर विजय पा सकते हैं :

कृत्रिम टांग लगाना

रणभूमि में रात्रि में युद्ध करते-करते खेल योद्धा की पत्नी विश्पला की टांग कट कर गिर पड़ती है, जैसे पक्षी का पंख टूट कर गिर जाता है। खेल है ऐसा वीर जो संग्राम को क्रीड़ा समझता है। विश्पला का अर्थ है प्रजा का पालन करने में समर्थ वीरांगना। अश्विनौ नामक चिकित्सक उसकी टूटी टाँग के स्थान पर नई आयसी जंघा लगा देते हैं, जिससे वह आसानी से चल-फिर सकती है-

चरित्रं हि वेरिवाच्छेदि पर्णमाजा खेलस्य परितक्म्यायाम्।
सद्यो जङ्घामायसीं विश्पलायै धने हिते सर्तवे प्रत्यधत्तम्।।

ऋग् १/११६/१५

यहाँ केवल काम चलाऊ चलने-फिरने की बात नहीं, अपितु 'धने हिते सर्तवे' कहा है, जिसका अर्थ सायणाचार्य करते हैं 'शत्रुओं में निहित धन को जीतने के लिए गति करना अर्थात् युद्ध करना।' एवं वेद की दृष्टि में कटी हुई टांग के बदले शल्य चिकित्सक ऐसी सुदृढ़ कृत्रिम टांग लगा सकते हैं जिससे वास्तविक टांग के समान युद्ध भूमि में लड़ा भी जा सकता है।

अन्धों को नेत्र देना

किसी रोग विशेष से अन्धे हुए व्यक्तियों में पुनः नेत्रज्योति लायी जा सकती है, इस तथ्य को बताने वाली एक कथा वेद में इस प्रकार है। एक ऋज्राश्व नाम का राजा है। ऋज्राश्व का अर्थ है ऐसा पुरुष जिसके इन्द्रियरूपी घोड़े सरल मार्ग पर चलते हैं, पर सत्पुरुष भी कभी व्यसन में पड़ जाते हैं। वह ऋज्राश्व प्रजा की सैकड़ों भेड़ों को पकड़-पकड़ कर वृकी को खिलाने लगता है। ऐसा अहित करते देख उसे पिता प्रभु अन्धा कर देते हैं, उसकी आँखों में मोतिया उतर आता है। तब वह अपनी करनी पर पश्चात्ताप करता है। वे शल्य-चिकित्सा कर पुनः उसे नेत्र प्रदान कर देते हैं-

शतं मेषान् वृक्ये चक्षदानंमृज्राश्वं तं पितान्धं चकार। तस्मा अक्षी नासत्या विचक्ष आधत्तं दस्रा भिषजावनर्वन्।।

ऋग् १/११६/१६

वृद्ध को तरुण बनाना

आजकल कुछ वैज्ञानिक ऐसी औषधि के आविष्कार में लगे हैं, जिससे वृद्ध को तरुण बनाया जा सके। वेद में इस विद्या का भी वर्णन मिलता है।

अश्वी वैद्य एक जीर्ण शरीरवाले च्यवान को अपनी संजीवनी क्रियाओं से पुन: युवा कर देते हैं-

शेष भाग पृष्ठ संख्या ३४ पर....

पृष्ठ संख्या २५ का शेष भाग....

युवं च्यवानमश्विना जरन्तं
पुनर्युवानं चक्रथुः शचीभिः।।

१/११७/१३

ऋतुओं के सम्बन्ध में भी वेद ऐसी ही चर्चा करता है। वे वृद्ध माता-पिता को पुन: युवा बना देते हैं।

पुरुष सन्तान उत्पन्न करना

जिन स्त्रियों के कन्याएं ही उत्पन्न होती हैं, उनके लिए पुत्रोत्पत्ति का वेद में यह उपाय बताया गया है कि शमी वृक्ष के ऊपर उगे हुए अश्वत्थ (पीपल) का वे सेवन करें। अब यह सेवन किस प्रकार, किस रूप में, किस समय किया जाये इसका अनुसन्धान करना भिषगाचार्यों का कार्य है।

शमीमश्वत्थ आरूढ़स्तत्र पुंसुवनं कृतम्।
तद् वै पुत्रस्य वेदनं तत् स्त्रीष्वाभरामसि।।

अथर्व ६/११/१

इस प्रकार वेदों में प्रतिपादित कुछ वैज्ञानिक विषयों की चर्चा इस संक्षिप्त लेख में की गई है। अन्य भी अनेक विज्ञान सम्बन्धी बातों का मूल-रूप से वर्णन वेदों में उपलब्ध होता है। उनसे प्रेरणा पाकर हम इस दिशा में अग्रसर हो सकते है। एक शंका यह की जाती है कि यदि वेद में व्योमयान आदि के निर्माण की विधि नहीं लिखी तो वेदों के ये वर्णन हमारे लिए निरर्थक हैं, हम इनका क्या करें, परन्तु वेद तो वस्तुत: प्रेरणा के स्रोत हैं। हमें क्या-क्या करना चाहिए किस-किस दिशा में प्रगति करनी चाहिए यह प्रेरणा वेद से प्राप्त होती है, उसे हम किस प्रकार करें यह हमें अपनी बुद्धि से समझना है। आज भी जिन्होंने वैज्ञानिक वस्तुओं का आविष्कार किया है, वह क्या कहीं अक्षरश: लिखा हुआ पढ़ कर किया है? जैसे उन्होंने किया वैसे हम भी कर सकते हैं, प्रेरणा हम वेद से ले सकते हैं।

गुरुकुल प्रवेश सूचना

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषिउद्यान, अजमेर में संस्कृत भाषा, पाणिनीय व्याकरण, वैदिक दर्शन, उपनिषदादि के अध्ययन हेतु प्रवेश आरम्भ किये गए हैं। इन्हें पढ़कर वैदिक विद्वान्, उपदेशक, प्रचारक बन सकते हैं। कम से कम दसवीं कक्षा उत्तीर्ण १६ वर्ष से बड़े युवकों को प्रवेश मिल सकता है। प्रवेशार्थी को पहले ३ माह का अस्थाई प्रवेश दिया जाएगा। इस काल में अध्ययन व अनुशासन में सन्तोषजनक स्थिति वाले युवकों को ही स्थाई प्रवेश दिया जाएगा। सम्पूर्ण व्यवस्था नि:शुल्क है। गुरुकुल में अध्ययन के काल में किसी भी बाहर की परीक्षा को नहीं दिलवाया जाएगा, न उसकी अनुमति रहेगी। प्रवेश व अधिक जानकारी के लिए-

चलभाष : ७०१४४४७०४० पर सम्पर्क कर सकते हैं। सम्पर्क समय- अपराह्न ३.३० से ४.३०।

संस्था समाचार

प्रात: काल यज्ञोपरान्त प्रवचन के क्रम में आ कर्मवीर जी ने अपना अनुभव सुनाया ।आपको डीएवी कमेटी के द्वारा सम्मानित किया गया। आप ने बताया कि जब महर्षि दयानन्दजी का अजमेर में देहावसान हुआ। उस समय गुरुदत्त जी उनके पास थे। जब स्वामी श्रद्धानन्द जी ने महर्षि दयानन्द जी की श्रद्धांजलि सभा रखी । उसमें यह विचार किया गया कि महर्षि दयानन्द जी विद्या प्रिय थे। उनकी स्मृति में कोई विद्यालय खोला जाए और उसी समय डीएवी की स्थापना का विचार हुआ। उसमें महात्मा हंसराज जी ने कहा कि मैं आजीवन अवैतनिक इसमें पढ़ाऊंगा और उन्होंने ऐसा ही किया । अभी वर्तमान में डीएवी के लगभग 950 विद्यालय हैं 1000 अध्यापक हैं और 34,00,000 विद्यार्थी हैं। जब से श्रीमान् पूनम जी सूरी जो आनन्द स्वामी जी के पौत्र हैं डीएवी के अध्यक्ष बने हैं। तब से उन्होंने हर विद्यालय में यज्ञशाला की स्थापना करवाई है और विद्वानों का सम्मान भी कर रहे हैं।

गुरुकुल मलारना चौड़ के आचार्य सोमदेव ने बताया कि ऋग्वेद यजुर्वेद और सामवेद यह चारों वेद हमारे चारों आश्रम से जुड़े हुए हैं। ऋग्वेद का संबंध ब्रह्मचर्य आश्रम से है। जहां विद्या प्राप्त की जाती है । अज्ञान सबसे बड़ा शत्रु है। अज्ञानता से विपरीत कर्म करते हैं और दुखी होते हैं । यजुर्वेद का संबंध गृहस्थ आश्रम से है जहां पुरुषार्थ पूर्वक कार्यों को किया जाता है और समाज का उपकार भी किया जाता है। सामवेद का संबंध वानप्रस्थ से जहां साधना की जाती है स्वाध्याय,आत्मा परमात्मा का चिंतन किया जाता है। और अथर्ववेद का संबंध संन्यास आश्रम से है। जो प्राप्त ज्ञान प्राप्त किया, कर्म किया और उपासना की उसका सार उत्पन्न हो जाता है। संसार के विषय दु:खदायक हैं आदि विशेष ज्ञान उत्पन्न होता है संन्यासी अपनी अविद्या की गांठ खोलता है वैसे दूसरों का भी करता है। जब तक हम इन चारों वेदों के विषय से जुड़े रहेंगे तब तक हम सुखी रहेंगे नहीं तो समस्याओं से घिरे रहेंगे।

भजन के क्रम में ब्र. भानु प्रताप जी ने गाया- हे ज्ञानवान् भगवन् हमको भी ज्ञान दे दो। साथ ही पंडित भूपेन्द्र जी व पंडित लेखराज जी के भी भजन हुए।

अतिथि होता- परोपकारिणी सभा के कोषाध्यक्ष श्री सुभाष जी नवाल, बड़े भाई श्री ओमप्रकाश जी नवाल व छोटे भाई श्री दिनेश जी नवाल के साथ सपरिवार इष्ट मित्रों सहित अपने पिता श्री मथुरा प्रसाद जी नवाल जो कि परोपकारिणी सभा के कोषाध्यक्ष रह चुके हैं। अपने भाइयों सहित व परिवार सहित प्रात:काल यज्ञ करके अपने पिताश्री की जयन्ती मनाई । आपने अपने परिवार में स्वयं, पुत्र, पुत्री, पौत्र, पौत्री आदि 17 सदस्यों को जन्म दिन, विवाह वर्षगांठ आदि के रूप में अतिथि यज्ञ के होता बनाए हैं। जिनकी कुल राशि 86,700 (17म5100) है। आपने इस दिन आश्रम वासियों अतिथियों व गुरुकुल वासियों के लिए विशिष्ट प्रातराश की व्यवस्था भी की। आपके परिवार के ही श्री कैलाश जी व श्रीमती कञ्चन जी का भी वैवाहिक वर्षगांठ साथ ही मनाया गया।

श्री दीपक जी व श्रीमती मेनका सिंह जी ने अपनी 25वीं वैवाहिक वर्षगांठ ऋषि उद्यान में आकर सायं यज्ञ करके सपरिवार,इष्ट मित्रों के साथ वैवाहिक वर्षगांठ की आहुति दे कर मनाया। आ कर्मवीर जी आदि ने आशीर्वाद प्रदान किया। सभी आश्रमवासी, अतिथि महानुभाव व गुरुकुलवासी का सांयकालीन विशेष भोजन भी आपकी ओर से कराया गया।

श्रीमती दीपा माता जी के दामाद और पुत्री श्री गिरीश जी व श्री मती कशीश जी ने सपरिवार प्रात: यज्ञ करके वैवाहिक वर्षगांठ मनाया। आ कर्मवीर जी आदि ने आशीर्वाद दिया। आपकी ओर से सभी ऋषि उद्यान वासियों को खीर का प्रातराश करवाया गया।

(परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित)

योग–साधना एवं स्वाध्याय शिविर

(स्वामी विष्वङ्जी परिव्राजक के सान्निध्य में)

संवत् २०८०, आषाढ़ कृष्ण अष्टमी से अमावस्या तक, तदनुसार ११ से १८ जून २०२३

इस योग-साधना शिविर में योग सम्बन्धी विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक शिविरार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

३. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

४. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

५. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

६. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

७. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

८. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

९. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ- परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) कार्यालय से (०१४५-२९४८६९८, मो. ९३१४३९४४२१) से सम्पर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार अतिरिक्त भुगतान से की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गम्भीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर

देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने-पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क २००० रु. मात्र जमा करना होगा। पृथक् कक्ष का शुल्क २००० रु. अतिरिक्त देय है। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारम्भ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है, क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर **दूरभाष :** ०१४५-२९४८६९८, मो.नं. ९३१४३९४४२१

– : मार्ग : –

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

ऋषि उद्यान में आने वाले अतिथियों से निवेदन

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान अजमेर में आने वाले सज्जनों के निवास-भोजन की व्यवस्था की जाती है। यह व्यवस्था ठीक से चल सके, इसके लिए आप अतिथियों के सहयोग की अपेक्षा है। जो भी अतिथि यहाँ कम या अधिक दिन रुकना चाहें तो आने के कम से कम दो दिन पूर्व परोपकारिणी सभा या ऋषि उद्यान के कार्यालय में सूचना देकर स्वीकृति अवश्य प्राप्त कर लेवें। सूचना में अपना नाम, पता, दूरभाष व साथ में आने वाले व्यक्तियों की संख्या, उनकी अवस्था (आयु), स्त्री या पुरुष सहित बता देवें। शौचालय की सुविधा भारतीय या पाश्चात्त्य अपेक्षित है? आपके यहाँ पहुँचने व प्रस्थान का दिन और समय तथा भोजन ग्रहण करेंगे या नहीं, यह भी स्पष्टता से बता देवें। आधार कार्ड की छाया प्रति साथ लाएं। यह सब लिखकर व्हाट्सएप पर भेज देंगे तो श्रेष्ठ है।

आपकी सूचनाओं के होने पर आपके लिए व्यवस्था समुचित की जा सकेगी। अचानक बिना सूचना के आने पर होने वाली असुविधा व कष्ट से आप बच सकेंगे। साथ ही इससे यहाँ के कार्यकर्त्ताओं को भी अनावश्यक असुविधा से बचाने में सहायता होगी। आशा है आपका समुचित सहयोग मिल सकेगा। **सूचना हेतु सम्पर्क**-

ऋषि उद्यान कार्यालय	**- ०१४५-२९४८६९८**	**परोपकारिणी सभा कार्यालय**	**- ०१४५-२४६०१६४**
व्हाट्सएप	**- ८८९०३१६९६१**	**सम्पर्क का समय**	**- ११ से ४ बजे तक**

(किसी एक सम्पर्क पर सूचना देना पर्याप्त रहेगा) **निवेदक - मन्त्री**

आभूषण

सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभावरूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है। सोने, चाँदी, माणिक, मोती, मूंगा आदि रत्नादि से युक्त आभूषणों के धारण कराने से मनुष्य का आत्मा सुभूषित कभी नहीं होता क्योंकि आभूषणों के धारण करने से केवल देहाभिमान, विषयासक्ति और चोर आदि का भय तथा मृत्यु का भी सम्भव है।

सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास

परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन रियायती मूल्य पर

पुस्तक का नाम	पृ. सं.	वास्तविक मूल्य रुपये	छूट के साथ मूल्य रुपये
ऋग्वेद संहिता	९००	५००	४००
अथर्ववेद संहिता	५५०	४००	३००
ऋग्वेद भाष्य नवम भाग	४००	३००	२२५
पञ्चमहायज्ञ विधि	६२	२०	१५
वैदिक संध्या मीमांसा	१०७	४०	३०
महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दोनों भाग)	१३९२	८००	५००
महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित-पत्र	३३६	२००	१००
कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर (दोनों भाग)	९३८	९५०	६००
डॉ. धर्मवीर का सम्पादकीय संकलन (तीन भाग)	८१४	५००	२५०

यजुर्वेद भाष्य (महर्षि दयानन्द सरस्वती) पृष्ठ संख्या- २१९७, चार भागों का मूल्य = १३००/-
डाक-व्यय सहित विशेष छूट पर उपलब्ध मूल्य = १०००/-

पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-दूरभाष - 0145-2460120, चलभाष - 7878303382

VEDIC PUSTKALAYA
0510800A0198064
1342679A
0510800A0198064.mab@pnb

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु
खाताधारक का नाम - वैदिक पुस्तकालय, अजमेर
(VEDIC PUSTKALAYA, AJMER)
बैंक का नाम - पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-
0008000100067176
IFSC - PUNB0000800
UPI ID :
0510800A0198064.mab@pnb

विद्या के कोष की रक्षा व वृद्धि राजा व प्रजा करें

वे ही धन्यवादार्ह और कृत-कृत्य हैं कि जो अपने सन्तानों को ब्रह्मचर्य, उत्तम शिक्षा और विद्या से शरीर और आत्मा के पूर्ण बल को बढ़ावें जिससे वे सन्तान मातृ, पितृ, पति, सास, श्वसुर, राजा, प्रजा, पड़ोसी, इष्ट मित्र और सन्तानादि से यथायोग्य धर्म से वर्त्तें। यही कोष अक्षय है, इसको जितना व्यय करे उतना ही बढ़ता जाये, इस कोष की रक्षा और वृद्धि करने वाला विशेष राजा और प्रजा भी है। (सत्यार्थ प्रकाश सम्मुलास ३)

संस्था की ओर से....

क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते? तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में पञ्चमहायज्ञ अवश्य करणीय कर्म हैं। इन्हीं में से एक है- अतिथि यज्ञ। प्रत्येक गृहस्थ के लिए अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और वह राशि एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल/आश्रम में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय। इस राशि को प्रदान कर सभा के माध्यम से अतिथि यज्ञ सम्पन्न कर सकते हैं।

सभा की योजना के अनुसार प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी होता सदस्यों में अंकित किया जाता है, ऐसे सज्जनों के नाम परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक/सभा के खाते में ऑनलाइन द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। **आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।**

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि, जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे, तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। राशि जमा करने के पश्चात् दूरभाष द्वारा कार्यालय को अवश्य सूचित करें। दूरभाष - 8890316961

परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु बैंक विवरण

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715** **IFSC-SBIN0031588**

email : psabhaa@gmail.com **सूचना देने हेतु चलभाष - 8890316961**

दानदाताओं की सूची

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३० अप्रैल २०२३ तक)

१. मै. सार्थ डेवलपमेन्ट प्रा. लि., अजमेर २. श्री गणपतदेव सोमानी, राजगढ़ ३. श्री श्यामसुन्दर, जयपुर ४. श्री श्रीकान्त बाल्दी, अजमेर ५. श्री पुष्पा शर्मा, अजमेर ६. श्रीमती चम्पा देवी, अजमेर ७. श्री रामानन्द छापरवाल, इचलकरणजी ८. बालमुकन्द छापरवाल, अजमेर ९. श्रीमती शान्ति देवी, अजमेर १०. श्रीमती सुशीला बम्ब, अजमेर ११. श्री पुरुषोत्तम बम्ब, अजमेर १२. श्री जितेन्द्रसिंह बेदी, अजमेर १३. कृष्णकन्हैया मंत्री चेरिटेबल ट्रस्ट, अजमेर १४. श्री श्यामप्रकाश बाहेती, अजमेर १५. श्रीमती चन्द्रकान्ता माहेश्वरी, अजमेर १६. श्री रामचन्द्र सोमानी, अजमेर १७. श्री ओम्प्रकाश लढ्ढा, अजमेर १८. श्री अमरचन्द माहेश्वरी, अजमेर १९. मै. सोमानी इर्न्वटर एव बैट्री, अजमेर २०. श्री पन्नालाल गैना, अजमेर २१. श्री हरिकिशन कन्हैयालाल, अजमेर २२. श्री दुर्गालाल गंगवार, अजमेर २३. श्री प्रदीप गैना, अजमेर २४. श्री रामप्रसाद, अजमेर २५. श्री ओम्प्रकाश सोमानी, अजमेर २६. श्री भागचन्द सोमानी, अजमेर २७. श्री रणधीरसिंह चरखी दादरी।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि–उद्यान में परमार्थ हेतु गोशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गो–भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्चट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गोशाला के दानदाता

(१६ से ३० अप्रैल २०२३ तक)

१. श्रीमती चम्पा देवी, अजमेर २. श्री ओम्प्रकाश सोमानी, अजमेर ३. श्रीमती तुलिका कृष्ण कुमार साहू, बिलासपुर ४. श्रीमती यशोदा गणपतदेव सोमानी, अजमेर ५. श्रीमती गीता देवी चौहान, अजमेर ६. श्रीमती कौशल्या देवी, अजमेर ७. श्री महावीर, अजमेर ८. श्रीमती चन्द्रमणि, फरीदाबाद ९. श्री वेदपाल हुड्डा, फरीदाबाद १०. श्री अनुराग आर्य, सहारनपुर ११. ठाकुर विक्रम सिंह ट्रस्ट, दिल्ली १२. श्रीमती सन्तोष भटनागर, अजमेर १३. श्री विपिन कुमार, दिल्ली।

अन्य प्रकल्पों हेतु सहयोग राशि

१. श्री आर. सत्यनारायण रेड्डी, हैदराबाद २. श्री पूर्णाराम एवं रूधाराम, बीकानेर ३. श्री सुबोध मुनि, अहमदाबाद ४. श्री चन्द्रसेन हरिसिंघानी, अहमदाबाद ५. तुलिका साहू, विलासपुर ६. श्री कृष्ण कुमार साहू, विलासपुर ७. श्री चन्द्रप्रकाश आर्य, आबूरोड़ ८. श्री मुकेश रावत, सोनीपत ९. श्री विश्वनाथ चौरसिया, म.प्र. १०. श्री विपिन कुमार, दिल्ली ११. श्रीमती प्रेमलता दुग्गल, सूरत १२. श्री सोमदेव, नई दिल्ली १३. डॉ. निकॉल बिसेसर, यू.एस.ए. १४. आर्यसमाज सकेत, नई दिल्ली १५. श्री आशीष बड़ाया, दौसा १६. श्रीमती मीता मालू, इन्दौर १७. श्री ओम्प्रकाश सोमानी, अजमेर १८. श्री रमन मदनलाल गुप्ता, महाराष्ट्र १९. श्री शिवम् आर्य, मेरठ २०. श्री शिवपाल चौधरी, भीलवाड़ा।

'सत्यार्थ प्रकाश' एवं 'महर्षि दयानन्द जीवन-चरित्र' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' ने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति 'वैचारिक क्रान्ति' को जन्म दिया। अतः परोपकारिणी सभा ने ७ वर्ष पूर्व 'विश्व पुस्तक मेला' दिल्ली में प्रतिवर्ष **'सत्यार्थप्रकाश'** के साथ **'महर्षि का जीवन-चरित्र'** एवं **'आर्याभिविनय'** पुस्तक का वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है।

एक सैट की छपाई का खर्च लगभग १५० रु. आता है। **५०० से कम प्रतियों पर स्टिकर लगाकर तथा ५०० या अधिक प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित किया जाएगा।**

१५० रु. प्रति सैट के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं।

अपने दान के साथ 'सत्यार्थप्रकाश वितरण' अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	३०००/- रु.
	३० प्रतियाँ	४५००/- रु.
	५० प्रतियाँ	७५००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	१५०००/- रु.
	५०० प्रतियाँ	७५०००/- रु.
	१००० प्रतियाँ	१,५०,०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी राशि दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। धन्यवाद।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

yono SBI | SBI Payments

MERCHANT NAME : PROPKARNI SABHA
UPI ID : PROPKARNI@SBI

SCAN & PAY

BHIM
SBI Pay
BHIM UPI

सभा प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु बैंक विवरण

खाताधारक का नाम

परोपकारिणी सभा, अजमेर

(PAROPKARINI SABHA AJMER)

बैंक का नाम

भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-

10158172715

IFSC - SBIN0031588

UPI ID : PROPKARNI@SBI

जगी ज्योत सम्भाल रे भाई!

मुनि सत्यजित्

ज्योत-ज्योति-अग्नि-दीपक की छोटी सी अग्नि, टिमटिमाती-लहराती-ऊपर उठती अग्नि, छोटी सी अग्नि, किन्तु पूरे कमरे में प्रकाश फैलाती अग्नि। दीया-बाती-तेल तो है, बाती जला भी दी है, बाती जल गई है, किसी दीप से दीप जल गया है, किसी ज्योति ने आकर बाती को ज्योति से युक्त कर दिया है। दीप से दीप जला, ज्योति से ज्योति जली। दीया-बाती-तेल का निर्जीव सा संयोग जीवन्त हो उठा है, निष्प्राण-निष्क्रिय दीपक में प्राण-सक्रियता आ गई। दीपक सार्थक हो उठा। एक ज्योति ने दूसरे को ज्योति प्रदान कर दी है। ज्योत जग गई है। एक छोटा सा स्पर्श, थोड़ी-सी निकटता निष्क्रिय-निष्प्राण दीपक को सक्रिय कर गई, प्राणवान् बना गई, जीवन्त कर गई, जगाकर चली गई।

जगाने वाली ज्योति का अल्प मृदु संस्पर्श पर्याप्त है, ज्योति जगाने को। दीपक के पात्र में बाती-तेल तो हमें रखना है। माटी का दीपक, चाह रखे ज्योति की। जगी ज्योत दीपक आये धीरे से, सम्भावना टटोलने, एक दीपक और जल सके, प्रकाशित हो, प्रकाश करे, जलाये कुछ और ज्योत। पर वह मृदुल-स्नेहिल स्पर्श सार्थक कैसे हो? बाती-तेल के बिना। लौट पड़ता है, कहीं अन्यत्र मृदु संस्पर्श देने, कोई ज्योत जल सके। मिलेगा कोई बाती तेल वाला दीपक। आशा से भरा है, कभी निराशा भी पाता है, किन्तु आत्मविश्वास से पूरा है, आत्मविश्वास जस का तस है। मैं ज्योत वाला हूँ, ज्योत को जलाना जानता हूँ, ज्योत से पूरे कमरे को प्रकाशित कर विविध वस्तुओं से यथायोग्य व्यवहार कर पा रहा हूँ। प्रत्यक्ष है सब। अन्तर्मन प्रकाशित है, ज्योत को सम्भाले रखा है। जीवन सार्थक है मेरा, पर किसी अन्य दीपक की ज्योत जल सके, तो वह भी सार्थक कर सके अपने को।

प्रभु की कृपा से इस अनुपम मानव शरीर में, इस अनुपम पृथ्वी पर, मैं बाती-तेल से युक्त तो हूँ ही। छोटे से संस्पर्श मात्र से ज्योत जलाने वाले आसपास हैं, एक-दो नहीं अनेक हैं, असंख्य हैं। साक्षात् बोलने वाले, श्रेष्ठ आचरण वाले/परोक्ष किन्तु लेख-पुस्तक के रूप में विद्यमान, वेदादि शास्त्र के रूप में, मन्त्र-श्लोक-सूत्र के रूप में। ज्योत तो जल ही जाती है, एक नहीं अनेक बार, बार-बार, न जाने कब-कब, न जाने कब से, न जाने कितनी बार। जगी ज्योत अपने मृदु संस्पर्श से कब तक मुझे ज्योत प्रदान करेगी? अपने अल्प संस्पर्श को कितनी देर बनाये रखेगी? जगी ज्योत को पाने का सौभाग्य कितनी देर टिका रहने वाला है? इस सौभाग्य से आनन्दित रहने का अवसर कितनी देर का है? इस सौभाग्य से अपनी आत्ममुग्धता आकर्षक तो बहुत है, गौरव-आत्मसम्मान से भर देती है। पर कितनी देर? बाती-तेल को देखना तो उसका काम नहीं। जगी ज्योत अपनी बाती-तेल को सम्भाले, नई-नई ज्योत जलाये, यह क्या कम है? हमें पुनः पुनः ज्योत देने को अल्प-संस्पर्श की कामना लिए हुए है। अपने बाती-तेल को देखना तो सबका अपना काम है।

ज्योत जगी, छोटी नहीं है बात। जगी ज्योत का संस्पर्श मिला, कम नहीं है बात। इतना तो बहुत है, कमरे को प्रकाशित करने को। नये जगी-ज्योत दीपकों को और खोजने की आवश्यकता है? जिज्ञासु के वेश में अपने बुझे-बुझते दीपक को जलाये रखने की चाह, कब तक सहारा देने वाली है? बार-बार जलती बाती, जलाई जाती बाती, तेल के अभाव में कितना जलेगी? अन्य ज्योत-जगे दीपक भी व्यर्थ प्रतीत होंगे, अन्य की जगी ज्योत भी बुझी दिखने लगेगी, क्योंकि उसकी ज्योत जगी होती तो मेरा दीपक भी ज्योति वाला बन पाता। ज्योत से ज्योत जले। जिस ज्योत से ज्योत न जले, वह ज्योत ही

क्या? ज्योत तो ज्योत को जलाने वाली ही होती है। आशा निराशा में बदल रही है, कोई ज्योत दिख नहीं रही जो मेरी ज्योत को जला दे। क्या युग आ गया है, प्राचीन काल में ज्योत जलाने वाले थे तो बहुत ज्योत जल जाती थीं। आज तो ऐसा कोई दिखता नहीं।

ज्योत तो मेरी भी जली थी, पर जिस ज्योत से जली उसमें वह सामर्थ्य नहीं थी कि मेरी ज्योत को जलाने के बार भी जलाये रख सके। मेरी तीव्र इच्छा है, मेरी ज्योत जले, बार-बार जले, जलती रहे, बुझे तो कोई और ज्योत मिल जाये, प्रभु मेरी ऐसी सहायता कीजिए, मैं हृदय से कामना करता हूँ, अन्य कोई नहीं तो आप ही अन्तिम सहारे हैं, आप तो जलाये रखिए मेरी ज्योत। आप की कृपा भी मुझसे रूठ सी गई है। मुझे बताइये मैं कैसे आपका कृपा पात्र बन सकूं? मेरी प्रार्थना कब सफल होगी? मुझे कब तक और प्रतीक्षा करनी होगी? मुझे आप पर पूरा विश्वास है, आप सर्वसमर्थ हैं। मेरी ज्योत जला दीजिए या जलवा दीजिए। सबई सहायक सबल के, कोउ न निबल सहाय। पर आप तो निबल सहाय हैं!!

ज्योत तो जली थी, न जाने कितनी बार जली थी। ज्योत तो जली थी, आगे भी जल जायेगी, बार-बार जलेगी। ज्योत जलाने वाले भी मिलते रहेंगे। न मिले तो स्वयं भी ज्योत जगाने के अवसर अन्दर-पास-दूर मिलते दिखते ही रहेंगे। जो ज्योत जगी है, उसे तो पहले सम्भालना है। ज्योत स्वयं बढ़ने वाली है, बढ़े बिना रह नहीं सकती, थोड़ा बाती को तो ठीक रखना होगा, थोड़ा तेल बनाये रखना होगा। जगी ज्योत ने बढ़ने को कब मना किया? जिस ज्योत ने अल्प संस्पर्श से ज्योत जगाई उसने कहाँ सीमा बाँधी थी? कहाँ प्रतिबन्ध लगाया था? इससे अधिक ज्योत नहीं बढ़ा सकते, जितनी दी है उतनी ही रखना। बुझाना, तो मैं पुनः पुनः जगाती रहूँगी!

ज्योत से ज्योत जलती है। जगी ज्योत जगी रह सकती है। जगी ज्योत का जगा रहना भी कम नहीं, वह तो और अन्यों को भी जगा सकती है। जो ज्योत अन्यों को जगाने की सामर्थ्य रखती हो, वह ज्योत स्वयं बुझ जाये, यह आश्चर्य से कम नहीं। पर आश्चर्य तो होते रहते हैं। आश्चर्यों की कोई कमी नहीं। एक से बढ़कर एक महान् आश्चर्य। आश्चर्यों की कोटि-शृंखला में एक आश्चर्य मेरा भी है? एक अजूबा मेरा भी है? जगी ज्योत जगी रहे, जगी ज्योत को जगाये रख सकूं, कोई दूसरी ज्योत जगे न जगे, जगी ज्योत जगी रहे। ज्योत का इच्छुक दीपक आयेगा, तो स्वयं निकट आकर अपनी ज्योत जगा लेगा। मेरी ज्योत जगी रहे, बाती-तेल सम्भले रहें। जगी ज्योत सम्भाल रे भाई, जगी ज्योत सम्भाल।।

मुक्त पुरुषों को 'युगपत्' ज्ञान होता है

जिसे 'धनञ्जय' वायु का ज्ञान हुआ है और जिसकी आत्मा उसमें सञ्चार कर सकती है और जिनके आत्मा से पूर्वजन्म संस्कार निकल चुके हैं वह और जिसके आत्मा में स्थायी शान्ति उत्पन्न हुई है, जिसके आत्मा को अत्यन्त पवित्रता, स्थिरता, ज्ञानोन्नति की पहचान हो चुकी है और जिसकी दृष्टि को और मनोवृत्ति को ज्ञान सुख के बिना अन्य सुख विदित नहीं है, ऐसे योगी को परमानन्द प्राप्त होता है। ऐसे मुक्त पुरुषों को देश, काल, वस्तु परिच्छेद का 'युगपत्' ज्ञान होता है, उन्हें 'युगपत्' ज्ञान का अटक नहीं है। जैसे एक कण शक्कर चींटी को मिले तो वह उसे ले जाना चाहती है; परन्तु उसे एक शक्कर का गोला मिल जाये तो उसी शक्कर के गोले को वहीं पर चाट लिपट जाती है; इसी तरह योगियों की आत्मा की स्थिति परमानन्द प्राप्त होने पर होती है।

-स्वामी दयानन्द सरस्वती (पूना प्रवचन)

परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा संचालित

महर्षि दयानन्द आश्रम जमानी, इटारसी, मध्यप्रदेश में नवीन गुरुकुल का शुभारम्भ

गुरुकुल के आचार्य सत्यप्रिय आर्य एवं ब्रह्मचारियों का सामूहिक चित्र

जमानी आश्रम में सामूहिक यज्ञ करते ब्रह्मचारीगण

आर जे/ए जे/80/2021-2023 तक प्रेषण : ३०-31 मई २०२३ आर.एन.आई. ३९५९/५९

परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा आयोजित

भव्य ऋषि मेला

१८ से २० नवम्बर २०२३

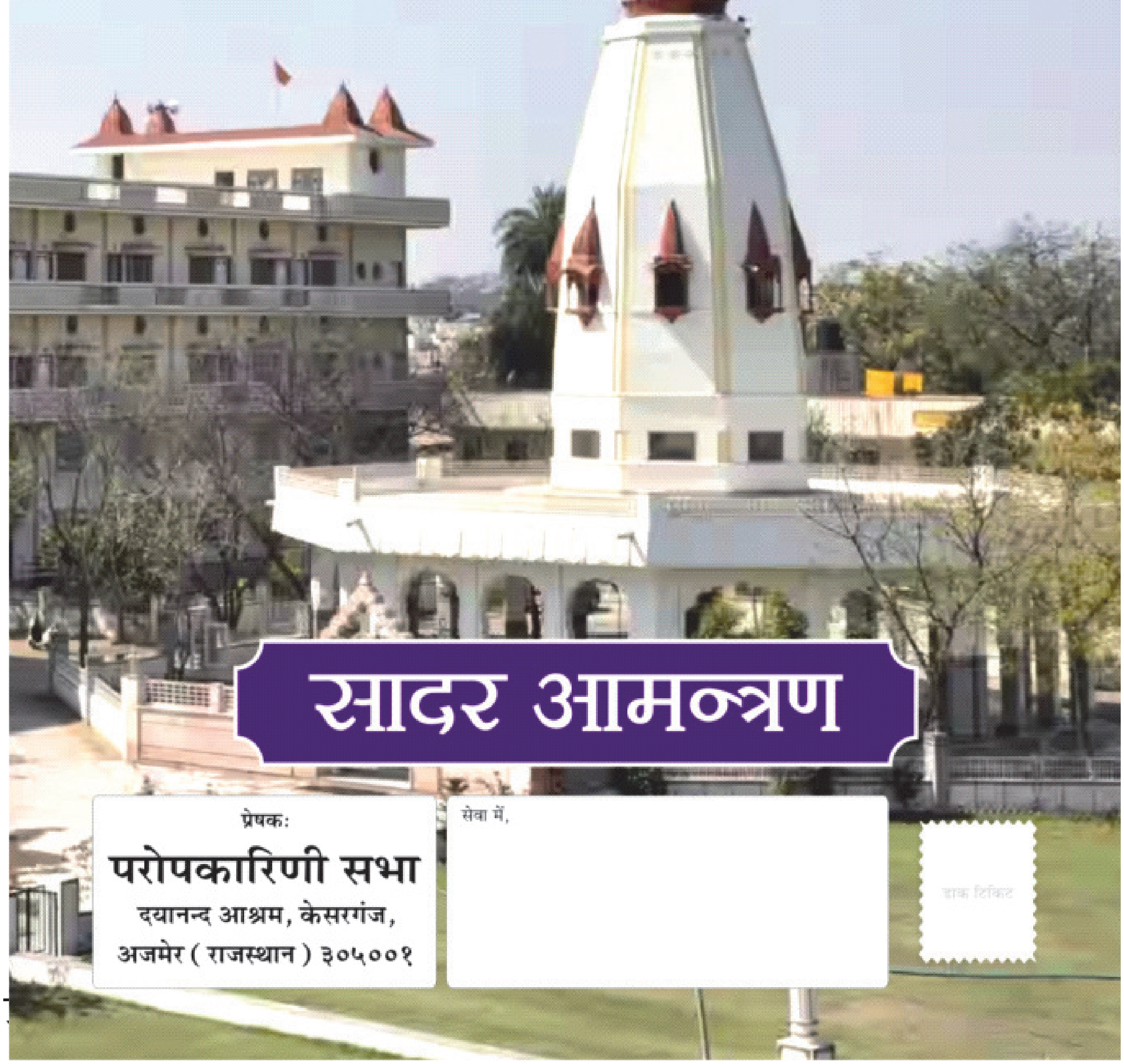

सादर आमन्त्रण

प्रेषकः
परोपकारिणी सभा
दयानन्द आश्रम, केसरगंज,
अजमेर (राजस्थान) ३०५००१

सेवा में,

डाक टिकिट